अध्यात्म योग का मासिक पत्र

प्रेक्षाध्यान

वर्ष 39
अंक 08
अगस्त 2018

www.preksha.com

- आलंबन से ध्यान का प्रारम्भ
- मन का स्वरूप
- दर्शन-सम्पन्नता से क्या मिलेगा ?

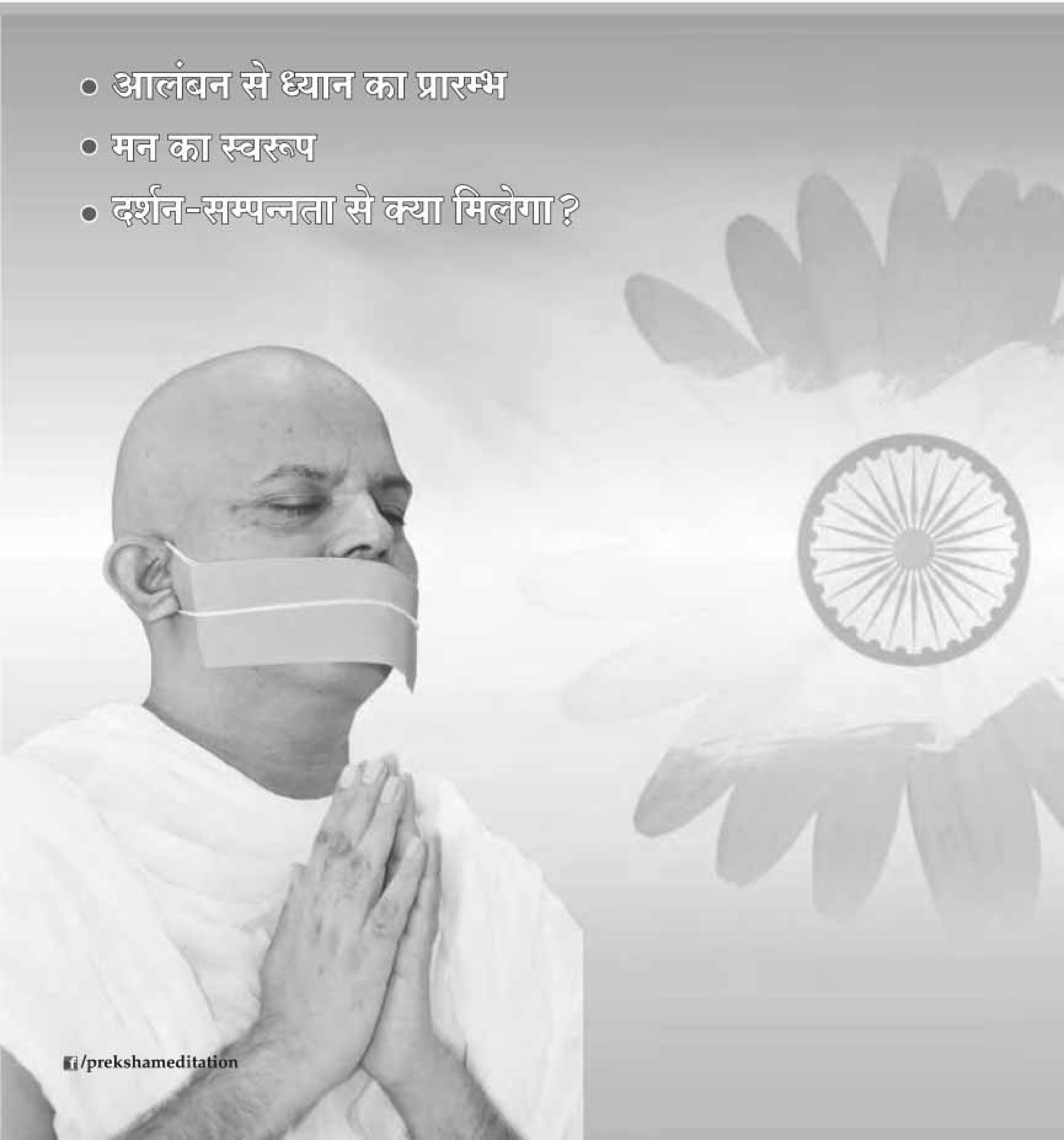

/prekshameditation

PREKSHA MEDITATION

A Solution to every problem

Gave me emotional stability

I am practicing Preksha Meditation since 2006. This experience gave me good health and emotional stability, focus, happiness in my life, energy and fearlessness.

VALENTINA UPOROVA
Russia

प्रेक्षाध्यान

अध्यात्म योग का मासिक पत्र

Tulsi Adhyatma Needam
Jain Vishva Bharati
Publication

Prekshadhyan
A Spiritual Yoga Monthly

वर्ष 39 अंक 08 अगस्त 2018

सम्पादक
जैन लूणकरण छाजेड़
+91 9887914000
lkchhajer3@gmail.com
editor@preksha.com

शुल्क :

प्रति अंक	:	30 रु.
पाँच वर्ष	:	2000 रु.
दस वर्ष	:	3000 रु.
एक वर्ष (विदेश)	:	2500 $

कार्यालय :
प्रेक्षा फाउण्डेशन
तुलसी अध्यात्म नीडम्
जैन विश्व भारती
लाडनूं-341 306
राजस्थान
भारत
दूरभाष :
+91 1581 226119
+91 82333 44482
www.preksha.com

© सर्वाधिकार सुरक्षित

पाठकों के सुझावों का स्वागत है
-सम्पादक
+91 9414139192

: वैधानिक सूचना :
प्रेक्षाध्यान मासिक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों से सम्पादक/प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है और न उनका कोई वैधानिक उत्तरदायित्व ही है।

भीतर के पृष्ठों पर

आलंबन से ध्यान का प्रारम्भ	आचार्य तुलसी	06
मन का स्वरूप	आचार्य महाप्रज्ञ	07
दर्शन-सम्पन्नता से क्या मिलेगा?	आचार्य महाश्रमण	10
बदले जीवन शैली	साध्वी प्रमुखा कनकप्रभाजी	12
लेश्या द्वारा व्यक्तित्व रूपान्तरण	मुमुक्षु डॉ. शान्ता जैन	14
प्रेक्षा-कथा	मुनि दुलहराज	15
किसने कहा मन चंचल है?	डॉ. वचनदेव कुमार	16
प्रेक्षा-दर्शन		18
प्रेक्षा फाउंडेशन संबद्धता प्राप्त केन्द्र सूची		19
कार्य क्षमता का विकास	मुनि धर्मेश	20
प्रेक्षाध्यान और संस्कार निर्माण	मुनि सुखलाल	23
विज्ञान अध्यात्म की ओर	प्रो. मुसाफिर सिंह	24
Happiness And Fearlessness	Acharya Mahapragya	25
Pranayam	Mukhya Niyojika Sadhvi Vishrut Vibha	28
संचालित प्रेक्षावाहिनियों के संवाहकों की सूची		29
संभावित प्रेक्षावाहिनी संवाहकों की सूची		30
पर्यावरण प्रदूषण की समस्या और जैन दर्शन-1	डॉ. समणी हिमप्रज्ञा	31
कैसे करें जीवन का संचालन?	समणी विपुलप्रज्ञा	33
मारक औषधियों के मानसिक दुष्परिणाम	पं. श्रीराम शर्मा	35
प्राणायाम की महत्ता	वैद्य लक्ष्मीकान्त दीक्षित	36
जीवन रक्षक औषधि : लवंग	डॉ. एन.के. द्विवेदी	37
प्रेक्षा गतिविधियां		39-41

॥ प्रेक्षा फाउण्डेशन ॥
जैन विश्व भारती

प्रेक्षा कार्ड योजना

सुखी एवं शांतिपूर्ण जीवन जीने की दिशा में हमने बढाया एक कदम..........
आप भी साथी बनें और प्राप्त करें सदस्यता प्रेक्षा कार्ड की।

अधिक जानकारी के लिए Log on करें
www.preksha.com
सम्पर्क सूत्र : 09051401456, 8233344482

संग्रह की परिणति : संघर्ष

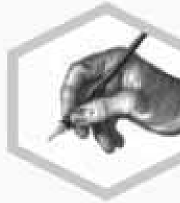

एकता और सहअस्तित्व-ये दोनों मनुष्य जाति के स्वाभाविक गुण हैं, किन्तु परिस्थिति और वातावरण की भिन्नता में इनकी विस्मृति हो जाती है। यह विस्मृति अस्वाभाविक नहीं है, क्योंकि परिस्थितियां और सन्दर्भ स्वभाव पर भी आवरण डाल देते हैं। मनुष्य सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक सन्दर्भों में जीता है, उनके परिपार्श्व में होने वाली प्रवृत्तियां स्वाभाविक गुणों पर हावी हो जाती है, मनुष्य किसी भी परिस्थिति में रहे, मानवीय एकता और सहअस्तित्व उसके लिए मौलिक तथ्य है। वर्तमान परिस्थिति में और काल के हर चरण में इनकी स्मृति कराना धर्म या अध्यात्म का काम है। इस स्मृति की उपयोगिता हर युग में है। चाहे वह युग शान्ति का हो या युद्ध का। युद्ध की परिस्थितियों में वह और अधिक आवश्यक है। अध्यात्म अपने दायित्व के प्रति जागरूक है। वह मानवीय एकता और सहअस्तित्व के मूल्यों की विस्मृति दोनों के लिए प्रयत्नशील है, क्योंकि यह विस्मृति विश्व-शान्ति में बहुत बड़ी बाधा है।

मनुष्य जीवन या जीवन की उच्चता के लिए संग्रह करता है। जहां संग्रह है, वहां द्वैत है। जहां द्वैत है, वहां संघर्ष है। संग्रह मनुष्य की एकता को खण्डित करता है और सहअस्तित्व में भी दरार डालता है। संघर्ष संग्रह की अनिवार्य परिणति है। ऐसा कभी नहीं हो सकता कि संग्रह हो और संघर्ष न हो।

नमि राजा दाह-ज्वर से पीड़ित थे। राज्य के सर्वोच्च वैद्यों ने उपचार किया पर राजा की पीड़ा कम नहीं हुई। दाह-ज्वर का प्रभाव क्षीण करने के लिए चन्दन का लेप करने का सुझाव दिया गया। रानियां चन्दन घिसने लगीं। उनके हाथों में चूड़ियां खनखना उठीं। चूड़ियों की खनखनाहट राजा के लिए असह्य हो गयी। रानियों को स्थिति की अवगति मिली। उन्होंने अपने हाथों में एक-एक चूड़ी छोड़कर बाकी सब चूड़ियां उतार दीं। खनखनाहट बन्द हो गयी। राजा ने पूछा-'चन्दन घिसना बन्द कर दिया है क्या?' परिचारकों ने बताया, 'राजन्! चन्दन अब भी घिसा जा रहा है।' चूड़ियों के शब्द कहां खो गए?राजा ने पूछा। राजा के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए परिचारक बोले-'राजन्! जिन चूड़ियों ने आपकी शान्ति भंग की, उन्हें उतार दिया गया है। अब रानियों के हाथों में एक-एक चूड़ी है।'

राजा के चिंतन में नया तथ्य उभरा। एकत्व और बहुत्व की निष्पति पर जाकर वह ठहर गया। राजा ने सोचा, संग्रह होने का परिणाम संघर्ष है। असंग्रह में संघर्ष नहीं होता। राजा का मन आश्वस्त हो गया। एकत्व की अनुभूति ने शरीर के दाह का अन्त कर दिया। शरीर के साथ मन को भी समाधान मिल गया।

अनिवार्यता जीवन की बहती धारा है। बहाव संग्रह नहीं है, संग्रह है उस बहाव को जमाकर रखना। पदार्थ को जमाकर रखने का भाव पैदा होते ही मानसिक संघर्ष की स्थिति पैदा हो जाती है। इस संघर्ष को वही टाल सकता है, जो वर्तमान में जीने की कला जानता है।

चिन्तन की गहराइयों में डूबे हुए एक सेठ ने गम्भीर मुद्रा में घर में प्रवेश किया। इससे पहले उसकी पत्नी उसे कई बार घर बुलाने का प्रयास कर चुकी थी, पर वह अपने काम में व्यस्त रहा। पत्नी ने विलम्ब का कारण पूछा। उसने कहा-'आज मैं अपनी सात पीढ़ियों की व्यवस्था करने में लग गया था, इसलिए समय पर नहीं आ सका।' पत्नी समझदार थी। सात पीढ़ियों की चिन्ता उसे बड़ी अटपटी लगी। कुछ समय बाद उसने अपने पति से कहा-'अपने घर के बाहर कुटिया में एक भिक्षु रहता है। आप उसे खाना दे आओ।' पति ने आनाकानी की, किन्तु पत्नी के आग्रह को वह टाल नहीं सका।

एक पात्र में कुछ रोटियां लेकर वह भिक्षु के पास पहुंचा और रोटियां उसकी ओर बढ़ा दी। भिक्षु निश्चित भाव से बैठा था। उसने कहा-'मैंने भोजन कर लिया है।'

सेठ बोला-'संध्या का भोजन इन रोटियों से हो जाएगा।' भिक्षुक ने मुस्कराते हुए कहा-'शाम के भोजन की चिंता अभी क्यों करूं?' भिक्षु के एक वाक्य ने सेठ के चिंतन को मोड़ दे दिया। वह सोचने लगा-'कितना विचित्र है यह व्यक्ति जो सांझ के खाने की चिंता भी नहीं करता और मैं सात पीढ़ियों की व्यवस्था कर रहा हूं।' उसे अपने पर हंसी आने लगी।

पैसे की चमक के आगे आज सभी चीजें अपनी चमक खो रही है। उसके पीछे हर चीज को ताक पर रखा जा रहा है। दायित्वबोध और निष्ठा धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही है। पैसा देकर आज कुछ भी कराया जा सकता है। आदमी का ईमान तक बिक रहा है। पैसे के लिए राष्ट्र-द्रोह तक का काम करने को लोग तैयार हो जाते है। ऐसी खबरें प्रायः सुनने को मिल जाती है कि सीमा पर सूचना पहुंचाने के लिए अमुक अधिकारी या कर्मचारी को पकड़ा गया।

महत्त्व बताना तो दूर की बात आज नैतिकता और चरित्र जैसे शब्दों का उच्चारण करने में भी संकोच का अनुभव होता है। क्या फायदा ऐसे शब्दों का प्रयोग करने से जो अपना वजूद खो चुके हैं। दृष्टि अर्थप्रधान बन जाए तो नैतिकता और चरित्र के लिए कोई अवकाश नहीं रह जाता। कभी ऐसा भी रहा कि चरित्र भ्रष्ट हो जाए तो महान् आश्चर्य माना जाता था। आज कोई साफ-सुथरा और बेदाग रह जाए तो आश्चर्य माना जाता है।

अर्थपरक चिंतन ने आदमी के सामने कई समस्याएं पैदा कर दी है। वह जानता है कि समस्या किस कारण से पैदा हुई, किन्तु धन संग्रह का व्यामोह एक क्षण के लिए भी उसे यह सोचने नहीं देता कि मेरे अर्थपरक चिंतन के कारण यह स्थिति पैदा हुई है। उस जाल को तोड़ने का सामर्थ्य होते हुए भी वह तोड़ नहीं पाता, क्योंकि अर्थ संग्रह की मूर्च्छा प्रबल है।

संग्रह वही व्यक्ति करता है जो भविष्य के लिए चिंतित रहता है। वर्तमान में जीने वाला संग्रह की कल्पना ही नहीं कर सकता। ऐसा व्यक्ति जीवन-मुक्त होता है। जीवन-मुक्त का लक्षण है-अतीत के चिंतन से उपरत, भविष्य की आकांक्षाओं से मुक्त और वर्तमान का अनासक्त भाव से उपयोग करना।

अतीताननुसन्धानं, भविष्यदविचारणम्।
औदासीन्यमपि प्राप्ते, जीवन्मुक्तस्य लक्षणम्।।

संग्रह मानवीय एकता और सहअस्तित्व की चेतना पर पहला आवरण है। इस आवरण को उतारे बिना संघर्ष से बचाव संभव नहीं लगता। संघर्ष से बचाव का माध्यम अपना आत्मावलोकन करना है। आत्मावलोकन के लिए नियमित प्रेक्षाध्यान लाभप्रद रहेगा।

जैन लूणकरण छाजेड़

आलंबन से ध्यान का प्रारम्भ

आचार्य तुलसी

संसार में दो प्रकार के व्यक्ति हैं-सापेक्ष जीवन जीने वाले और निरपेक्ष जीवन जीने वाले। जो सापेक्ष होकर जीते हैं, वे आलंबन लेकर चलते हैं। सामान्यतः हर व्यक्ति को सहारे की अपेक्षा रहती है। बच्चा जब चलना शुरू करता है तो मां की अंगुली पकड़कर चलता है। व्यवसाय के क्षेत्र में प्रवेश करने वाला अनुभवी व्यक्तियों का सहारा खोजता है। विद्यार्थी, अध्यापक का आलंबन चाहता है। पर्याप्त क्षमता अर्जित होने के बाद सहारे की जरूरत नहीं होती। अक्षमता की स्थिति में अवस्था प्राप्त व्यक्ति सहारे की अपेक्षा अनुभव करता है। ध्यान के क्षेत्र में प्रविष्ट होने वाले साधक भी प्रारम्भ में निर्विकल्प ध्यान नहीं कर सकते। इसलिए ध्यान के लिए भी आलंबन आवश्यक है।

महान व्यक्ति सहारे की प्रतीक्षा नहीं करते

आलंबन कौन नहीं लेता?जो व्यक्ति सक्षम होता है, संकल्प का धनी होता है, धृतिमान होता है, पुरूषार्थ में विश्वास करता है और बचाव का उपाय नहीं खोजता, वह सहारे की प्रतीक्षा नहीं करता। थोड़ी-सी साधन सामग्री से भी वह अपने गंतव्य की ओर प्रस्थान कर देता है। मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम के बारे में कहा जाता है-

विजेतव्या लंका चरणतरणीयो जलनिधिः
विपक्षः पौलस्त्यो रणभुवि सहायाश्च कपयः।
तथाप्येको रामः सकलमवधीत् राक्षसकुलम्,
क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवित महतां नोपकरणे।।

लंका पर विजय पाने और समुद्र को लांघने का कठिन कार्य। सामने रावण जैसा शक्तिशाली दुश्मन। इधर युद्ध में सहायता करने वाले बंदर। इस स्थिति में भी श्रीराम का मन प्रकंपित नहीं हुआ। उनके विचारों की धरती पर संदेह का पौधा नहीं उगा। वे चले, लंका पहुंचे और संपूर्ण राक्षसकुल को जीतकर सफल हो गए। पुरुषों की सफलता उपकरण सामग्री में नहीं, उनके सत्त्व में रहती है, प्रबल मनोबल में रहती है। संसार में जितने भी महान व्यक्तित्व हुए हैं, वे कभी साधन सामग्री के मोहताज नहीं बने। जो साधन उपलब्ध हुए, उन्हीं के बल पर उन्होंने लक्ष्य तक पहुंचने में सफलता पाई।

देखने-देखने में अंतर

ध्यान के आचार्यों और योगसाधकों ने निरालंबन एवं सालंबन-दोनों प्रकार की ध्यान साधना को अपनी स्वीकृति दी है। जो लोग पहुंचे हुए होते हैं, परिपक्व होते हैं, वे निरालंबन ध्यान का प्रयोग करते हैं। प्रारम्भ में आलंबन बिना चित्त को ठहरने का स्थान नहीं मिलता। चित्त चंचल न हो, उसे पकड़ा जा सके, किसी एक बिन्दु पर केन्द्रित किया जा सके, इस दृष्टि से अनेक आलंबन बताए गए है। रूपस्थ, पदस्थ आदि ध्यान की प्रक्रियाओं में आकृतियों और मंत्रों का आलंबन लिया जाता है।

ध्यान के लिए जितने आलंबन हैं, उनमें से सबसे सीधा और सुलभ आलंबन है श्वास। प्रेक्षा ध्यान साधना में श्वास प्रेक्षा ध्यान की एक भूमिका है। इस भूमिका में पूरी स्थिरता और जागरूकता के साथ श्वास को देखा जाता है। अन्य कोई आलंबन लेना हो तो उसकी खोज करनी पड़ती है। श्वास ऐसा तत्त्व है, जो निरन्तर साथ रहता है, पर उसे देखने के लिए भी विशेष प्रकार की दृष्टि अपेक्षित है। देखते सब हैं, पर देखने-देखने में बहुत बड़ा अंतर होता है।

श्वास के बाद देखने का तत्त्व है-शरीर। इसे भी कहीं से मांगने या उधार लेने की अपेक्षा नहीं है। हर व्यक्ति के पास अपना शरीर होता है। श्वास पर किसी का ध्यान टिके या नहीं, शरीर स्थूल आलंबन है। उस पर सुविधा से मन को केन्द्रित किया जा सकता है। ध्यान इतना ही देना है कि इसे देखने का नजरिया कैसा है?

राम, सीता और लक्ष्मण वन में गए। भरत ननिहाल से लौटकर आया। उसने राज्याभिषेक की बात स्वीकार नहीं की। कैकेयी के सामने समस्या खड़ी हो गई। भरत राम को अयोध्या लौटा लाना चाहता था। वह अपनी माता और मंत्री को साथ ले राम से मिलने के लिए अयोध्या से निकल पड़ा। खोजते-खोजते उसे राम दिखाई दिए। दौड़कर वहां पहुंचा। उसने राम, सीता और लक्ष्मण को प्रणाम किया। राम ने भरत को छाती से लगा लिया। भरत राम को देखने लगा तो देखता ही रहा। राम ने पूछा-'भरत! ऐसे क्या देख रहे हो?' भरत बोले-'भैया, आप नए-नए से लग रहे हैं। आपमें यह विलक्षणता कहां से आ गई?मैं चाहकर भी आपके चेहरे से दृष्टि नहीं हटा सकता। इच्छा होती है, मैं आपको देखता ही रहूं।' राम वही थे। भरत की दृष्टि में नयापन था। इसी कारण उसे राम में विलक्षणता का दर्शन हुआ।

समस्या आवेश की

साधक अपने श्वास को नई दृष्टि से देखे। शरीर को नई दृष्टि से देखे। गहराई में उतरकर देखे। श्वास और शरीर को देखना भी एक बिन्दु है। वास्तव में उनको नहीं देखना है। वे तो माध्यम हैं, आलंबन हैं। उनके सहारे अपने आपको देखना है। आत्मा को देखते-देखते गहराई में प्रवेश होगा तो श्वास और शरीर सब पीछे छूट जाएंगे, किन्तु जब तक मन में राग-द्वेष, आक्रोश, घृणा और पूर्वाग्रह के भाव सक्रिय रहेंगे, आत्मदर्शन नहीं हो सकेगा।

अमेरिका में युद्ध का प्रसंग था। वहां के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन ने सेनाध्यक्ष को पदमुक्त कर दिया। संकट की स्थिति में वर्षों से कार्यरत सेनाध्यक्ष को हटाना कुछ लोगों को उचित नहीं लगा, पर लिंकन अपने निर्णय पर स्थिर था। वह घर पहुंचा। उसकी पत्नी ने कहा-:'आपको क्या हो गया?युद्ध के समय सेनाध्यक्ष को बदलना नई समस्या को न्यौतना है। आप अपने पैरों पर कुल्हाड़ी क्यों चला रहे हैं?'

लिंकन पत्नी की बात सुनकर बोला-'तुम अपनी चंड प्रकृति के कारण अब तक भी अपने पति को नहीं जीत सकी। इसी प्रकार हमारा सेनाध्यक्ष अपनी उत्तेजना और असंतुलन के कारण सेना को विजयी नहीं बना सकेगा। उसके भरोसे सेना को छोड़कर मैं खतरा मोल नहीं ले सकता।'

लिंकन की यह बात बड़ी गहरी है। जब तक व्यक्ति आवेश में रहता है, वह सही रूप में नहीं देख सकता। अपने आपको तो वह देख ही नहीं सकता। सबसे पहले व्यक्ति अपने आवेश को समाप्त कर शांत मन में श्वासप्रेक्षा का प्रयोग करे, क्योंकि यह समस्या सर्वाधिक जटिल है। इसे लक्ष्य कर प्रेक्षा संगान में कहा गया है-

समस्या आवेग की है जटिलतम जग में,
आदतों की विवशता है व्याप्त रग-रग में।
हो रहा उपचार इस अवदान के द्वारा,
आत्म-साक्षात्कार प्रेक्षाध्यान के द्वारा।।

इस समस्या से कोई दस-बीस या सौ-पचास व्यक्ति ही परेशान हैं, यह बात नहीं है। लगभग पूरा संसार ही इससे संत्रस्त है, दुःखी है। इसका समाधान प्रेक्षाध्यान के पास है। बशर्ते कि व्यक्ति शुद्ध दृष्टि से अपने आपको देखे। दृष्टिकोण जब तक सही नहीं होगा, प्रेक्षाध्यान का वांछित परिणाम नहीं आ सकेगा। ❐

मन का स्वरूप

आचार्य महाप्रज्ञ

ध्यान करने वाले व्यक्ति के लिए या व्यवस्थित कार्य करने वाले व्यक्ति के लिए मन के स्वरूप को समझना बहुत जरूरी है और मन को समझना बहुत जरूरी है और मन को समझने के लिए उसके कार्य को समझना आवश्यक है। स्मृति, कल्पना और विचार-इनके द्वारा मन को समझा जा सकता है। ये तीनों मानसिक क्रियाएं हैं।

स्मृति

हमारे संस्कारों का जागरण होता है, स्मृतियां उभरती हैं। जो हमने देखा है, सुना है, अनुभव किया है, वे सब हमारे मस्तिष्क में संचित रहते हैं। स्मृति के प्रकोष्ठक हैं। उनमें और सूक्ष्म-शरीर में ये संचित रहते हैं। दोनों में सम्बन्ध है। वे संचितभाव धारणा बने हुए हैं। वे धारणाएं निमित्त और उद्दीपन पाकर समय-समय पर जागृत होती रहती है। हम जो देखते हैं, सुनते हैं, उनका निश्चय होता है। निश्चय होने के बाद वह बात धारणा में चली जाती है, स्मृति-चिन्ह बन जाती है। जो कुछ भी देखा, उसके स्मृति-चिन्ह नहीं बनते। बहुत सारी बातें हम देखते हैं, सामने आती है, चली जाती है। जिनका अध्यवसाय नहीं होता, निर्णय नहीं होता, वे स्मृति-चिन्ह नहीं बनते। जिनका अध्यवसाय हो जाता है, जिनकी धारणा बन जाती है, वे धारणाएं संचित रहती हैं, अविच्युत बनी रहती है, निमित्त के साथ प्रकट होती है।

स्मृति और प्रत्यभिज्ञा

स्मृति का दार्शनिक अर्थ है-'संस्कारप्रबोधसम्भवा स्मृतिः'-संस्कार के जागरण से उत्पन्न होने वाला ज्ञान स्मृति है। स्मृति का आकार है 'वह'। दो बातें हैं। एक है-स्मृति और दूसरी है पहचान। पहचान अलग होती है, स्मृति अलग होती है। स्मृति में वस्तु, व्यक्ति प्रत्यक्ष नहीं होता, परोक्ष ही रहता है, किन्तु पहचान में वह प्रत्यक्ष ही होता है इसीलिए स्मृति का आकार बनता है 'वह' और पहचान का आकार बनता है-'यह वह'। 'वह यह'-इसमें स्मृति और पहचान-दोनों हैं। स्मृति और पहचान में प्रत्यक्ष और परोक्ष-दोनों होते हैं।

मानसज्ञान : चार विकल्प

मति, स्मृति, संज्ञा, चिन्ता और अभिनिबोध-ये पांच शब्द हैं। जो हम सामने देखते हैं, नियतरूप से देखते हैं, उस बोध का नाम है 'अभिनिबोध।' इस बोध की दो शर्तें हैं। एक है-सामने होना और दूसरी है-नियत होना। सभी इन्द्रियों के कार्य नियत होते हैं। आंख का काम है देखना और कान का काम है सुनना। ये नियत हैं। इन दो शर्तों के साथ जो ज्ञान होता है, उसका नाम है-अभिनिबोध। इसके चार रूप बनते हैं-मति, स्मृति, संज्ञा और चिन्ता। मति का अर्थ है मनन, विचार। स्मृति का अर्थ है-याद होना। संज्ञा का अर्थ है-प्रत्यभिज्ञा, पहचान। चिन्ता का अर्थ है-तर्कपूर्ण चिन्तन, व्याप्ति या संबंधों की खोज।

इन्द्रियज्ञान या मानसज्ञान के भी ये चार विकल्प बन जाते हैं।

प्राणी का लक्षण

चेतना प्राणी का स्वरूपगत लक्षण है। इच्छा उसका व्यावहारिक लक्षण है। जिसमें इच्छा होती है, वह होता है जीव और जिसमें इच्छा नहीं होती, वह होता है अजीव। इसका हेतु यह है कि चेतना अभिव्यक्त होती है इच्छा के माध्यम से। एक चींटी चलती है। उसे देखते ही हम जान लेते हैं कि वह जीव है। उसकी गति का हेतु है उसकी स्वतंत्र इच्छा। उस इच्छा के माध्यम से वह स्वतंत्र रूप में गति करती है। उसी के माध्यम से उसका जीवन अभिव्यक्त होता है। यदि उसमें इच्छा नहीं होती तो उसमें गति नहीं होती और तब सहसा यह ज्ञात नहीं होता कि तिनके का टुकड़ा पड़ा है या चींटी है। आकार चेतन में भी होता है और अचेतन में भी। चेतन की पहचान होती है उसकी गति के द्वारा, प्रवृत्ति के द्वारा। गति और प्रवृत्ति इच्छापूर्वक ही हो सकती है, इसलिए जीव का व्यावहारिक लक्ष्य है-इच्छा।

कल्पना

इच्छा और अभिलाषा की अभिव्यक्ति है कल्पना। प्राणी में इच्छा होती है और वह मनोरथ या कल्पना के रूप में प्रगट होती है। कल्पना में कोई नया ज्ञान नहीं होता, केवल ज्ञान का संयोजन होता है। जो बातें ज्ञात हैं, उनका विभिन्न प्रकार से संयोजन होता है। भारतीय साहित्य में 'नरसिंह' की कल्पना की गई। इसमें मुंह सिंह का होता है और धड़ मनुष्य का। सिंह भी जाना हुआ है और आदमी भी जाना हुआ है। किन्तु दोनों का संयोजन विभिन्न प्रकार से कर लिया गया और 'नरसिंह' का रूप बन गया। इसी प्रकार 'आग ठंडी है' यह एक कल्पना है। इसमें भी दो बातें हैं। दोनों हमें ज्ञात हैं। हम आग को भी जानते हैं और ठंडे को भी जानते हैं। दोनों का हमने एकत्र संयोजन कर दिया और 'आग ठंडी है' यह हमारी कल्पना में आ गया।

इच्छा : कल्पना

इस प्रकार दो या अनेक ज्ञात तत्त्वों का संयोजन कर देना कल्पना है। स्वप्न में भी ऐसा ही होता है। इस दृष्टि से स्वप्न और कल्पना-दोनों बहुत निकट आ जाते हैं। इसलिए जो आदमी बहुत कल्पनाएं करता है उसको हम 'दिवास्वप्न' से अभिहित करते हैं। दिवास्वप्न का अर्थ है-आकाशी उड़ान। आदमी भी स्वप्न देखता है अर्थात् वह लम्बी-चौड़ी कल्पनाएं करता रहता है। आदमी स्वाभाविक और अस्वाभाविक-दोनों प्रकार की कल्पनाएं करता रहता है। वह अनेक चीजों का संयोजन कर देता है। स्वप्न में हम विचित्र प्रकार के आकार देखते हैं। उन आकृतियों में आंख किसी की होती है और टांग किसी की होती है। इसी प्रकार कल्पना के आधार पर भी विचित्र आकार बना लिए जाते हैं, जिनमें कोई संगति प्रतीत नहीं होती। पर यह एक तथ्य है-कल्पना में जिस प्रकार का आकार, रूप, रंग आया, उससे यह पता चल जाता है कि इच्छा क्या चाहती है और किस रूप

में प्रगट होना चाहती है। कल्पना के आधार पर इच्छा या आन्तरिक अभिलाषा को जाना जा सकता है।

कल्पना की सार्थकता

कल्पना का बहुत बड़ा उपयोग है। आदमी कल्पना करता है। वह कल्पना प्रेरक बनती है। वह कल्पना हमारे पुरुषार्थ और उद्यम की निमित्त बनती है। कल्पना के आधार पर ही आदमी पुरुषार्थ करता है और उस कल्पना को साकार बनाता है। विश्व में जितने भी आविष्कार होते हैं, पहले उन सबकी कल्पना की जाती है। आदमी ने एक बार कल्पना की थी कि आकाश में उड़ा जा सकता है। उसने इस दिशा में प्रयत्न प्रारम्भ किया और एक दिन वह आकाश में उड़ने लगा। प्रत्येक आविष्कार का प्रारूप हमारी कल्पना से बनता है और वह धीरे-धीरे आकार ग्रहण करता है। कल्पना को आकार तक पहुंचने में लम्बी प्रक्रिया से गुजरना होता है। वह प्रक्रिया योजना कहलाती है। योजना कल्पना का ही पूरक तत्त्व है। कल्पना, योजना और फिर उस प्रकार के विचारों, चिन्तनों और व्यवहारों या साधनों का संघटन करना होता है। वह कल्पना जब क्रियान्वित होती है, आकार लेती है तब नया तथ्य संसार के सामने आ जाता है।

कल्पना और संकल्प

भारतीय साहित्य में तीन शब्द बहुत प्रचलित है-कामधेनु, कल्पवृक्ष और चिन्तामणि रत्न। कामधेनु, कल्पवृक्ष और चिन्तामणि रत्न-ये कल्पना के ही सशक्त रूप हैं। वास्तव में इनका अस्तित्व ही नहीं होता। जिस व्यक्ति की कल्पना सघन और सुदृढ़ बन जाती है, वह संकल्प का रूप ले लेती है तब उसमें अपूर्व शक्ति का प्रादुर्भाव हो जाता है। वह संकल्प उस व्यक्ति के लिए कामधेनु, कल्पवृक्ष या चिन्तामणि रत्न बन जाता है अर्थात् उसके लिए सब कुछ बन जाता है।

संकल्प में बहुत बड़ी शक्ति होती है। जिस प्रकार का संकल्प होता है, परमाणुओं को भी उसी रूप में संगठित होने के लिए बाध्य होना पड़ता है। आकाश में बादल नहीं है। आदमी ने संकल्प किया। वह सघन और सुदृढ़ हुआ। इस स्थिति में परमाणुओं को बादल के रूप में बदलना होता है। यह इच्छाशक्ति का निदर्शन है कि वह परमाणुओं का संयोजन या वियोजन करने में सक्षम है।

कल्पना और विकल्प

कल्पना का दूसरा रूप है-विकल्प। यह मान लेना कि मैं सुखी हूं, मैं दुःखी हूं- यह कल्पना ही तो है। वास्तव में सुख-दुःख अनुभव के साथ जुड़ता है। कल्पना के साथ ही सुख और दुःख की तीव्रता आती है। यदि आदमी दृढ़ता से यह मान लेता है कि कुछ भी पीड़ा नहीं है तो वास्तव में उसका कष्ट पच्चीस प्रतिशत कम हो जाएगा। थोड़ी पीड़ा भी संकल्प के साथ अधिक तीव्र बन जाती है। पीड़ा की तीव्रता और मन्दता विकल्प के आधार पर होती है। जिस प्रकार की विकल्पना होती है, उसी प्रकार की अनुभूति होने लग जाती है।

यह टेबल है, यह घड़ी है-ये सारे हमारे विकल्प हैं। वास्तव में ये सब परमाणुओं के संगठनमात्र हैं। सभी पदार्थ परमाणुओं के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है किन्तु हमने एक आकार के साथ अपनी कल्पना जोड़ दी और उसको एक नाम दे दिया। यह विकल्प है। इस प्रकार कल्पना के तीन रूप बन जाते हैं-कल्पना, संकल्प और विकल्प।

विचार

तीसरा तत्त्व है-विचार। आदमी निरन्तर चिन्तन करता रहता है, सोचता रहता है। शब्द का व्यवहरण उसका माध्यम है। शब्द भी विचार है। विचार का अर्थ है-विचरण करना, गतिशील होना। इन्द्रियां अपने-अपने प्रतिनियत विषयों का ग्रहण करती है और वे सारे ग्रहण हमारे मस्तिष्क में अंकित होते रहते हैं। अब क्रिया का दूसरा क्रम चालू होता है। जो विषय गृहीत हैं, उनका निर्धारण करना, विश्लेषण करना, यह सारा कार्य मन करता है। एक दुःखी व्यक्ति है। उसने जो कार्य किया है, उसको बाहरी जगत् तक पहुंचा देना विचार का काम है। हमारे भीतर जो संस्कार, वृत्तियां और इच्छाएं हैं, उनका संयोजन करना, नियोजन करना, वियोजन करना एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना, एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के विषय में, एक वस्तु से दूसरी वस्तु के विषय में, एक स्थान या काल से दूसरे स्थान या काल के विषय में-इन सारे संबंधों में आना-जाना, इनसे सम्पर्क स्थापित करना, ये सारी मानसिक क्रियाएं विचार कहलाती है।

मन का कार्य

विचार के बिना एक-दूसरे के साथ सम्पर्क स्थापित नहीं हो सकता। इन्द्रियों का काम सम्पर्क स्थापित करना नहीं है। आंख ने एक कमरे के पंखे को देखा और कुछ ही समय पश्चात् दूसरे कमरे के पंखे को देखा। आंख यह नहीं सोच सकती कि यह वैसा ही पंखा है, जो पहले वाले कमरे में है। आंख का काम है आकार को पकड़ लेना। पंखे का तुलनात्मक अध्ययन करना, यह पंखा वैसा ही है या भिन्न है, इसका निर्णय करना मन का काम है, आंख का काम नहीं है। सम्पर्क का सूत्र है मन। यहां ठंड है, वहां गर्म है-यह निर्णय इन्द्रिय का नहीं, मन का होता है। गतिशील होना, सारे संबंधों को इधर-उधर ले जाना, परस्पर जोड़ना, संयोजन-वियोजन करना-यह है मन का कार्य।

विचार : संबंध-सूत्र

उच्छृंखलता से, बिना किसी पौर्वापर्य या संबंधों के विचारों का प्रवाह चलता रहता है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि हमारी इच्छाओं, संस्कारों और वृत्तियों का गहरा जमाव है। वे वृत्तियां निरन्तर स्पंदित होती रहती है। हमारे कर्मशरीर में स्पंदन होते रहते हैं, वे कभी रुकते नहीं। कर्मशरीर के सूक्ष्म स्पंदन हमारे स्थूल शरीर को प्रभावित करते हैं। उसी के कारण विचार का सिलसिला चालू रहता है, कभी नहीं रुकता। उनमें संबंध-सूत्र खोजा जा सकता है, किन्तु यह बहुत सूक्ष्म बात है।

असंबद्ध विचार क्यों ?

व्यक्ति अतीत के साथ जुड़ा हुआ है। उसने अतीत में कब, क्या, कैसे सोचा, किस प्रकार का आचरण और व्यवहार किया-इन सबके साथ वह जुड़ा हुआ है। किन्तु ये तथ्य इतने अज्ञात और सूक्ष्म हैं कि उनका संबंध-सूत्र खोजा नहीं जा सकता। हर व्यक्ति खोज नहीं सकता। इसलिए ऐसा लगता है-जो विचारों की श्रृंखला चल रही है, वह असंबद्ध है। स्थूलदृष्टि से ऐसा मान लिया जाता है। वास्तव में सारे विचार संबद्ध होते हैं। क्योंकि वे सब सहेतुक होते हैं, निर्हेतुक नहीं होते। अज्ञात होने के कारण उन्हें पकड़ नहीं सकते इसलिए हम उन्हें असंबद्ध मान लेते हैं। यह हमारा माना हुआ सत्य है, वास्तविक सत्य नहीं है।

संबद्ध विचार

दूसरे प्रकार का विचार होता है-संबद्ध विचार। आदमी किसी एक प्रश्न या समस्या पर विचार प्रारम्भ करता है। वह उसी समस्या पर चिंतन करता चला जाता है। जब समस्या का हल करने के लिए श्रृंखलाबद्ध, तर्कपूर्ण और व्यवस्थित चिन्तन चलता है तब हमें लगता है-ये विचार एक दिशा में चल रहे हैं। हमें सब कुछ पूर्ण संबद्ध प्रतीत होता है। संबद्ध विचार अधिकांशतः वर्तमान की समस्या, घटना या परिस्थिति के आधार पर चलता है। उसमें अतीत का अंश थोड़ा होता है। अतीत उससे जुड़ा अवश्य होता है पर उसकी मात्रा अल्प होती है। असंबद्ध विचार में अतीत का गहरा प्रभाव होता है।

ध्यान और स्मृति

हम प्रेक्षाध्यान के संदर्भ में विचार करें। एक प्रश्न है-स्मृति, कल्पना और विचार हमारे लिए क्यों जरूरी हैं। जब व्यक्ति ध्यान प्रारम्भ करता है तब वह सबसे पहले स्मृति का प्रयोग करता है। वह जो भी आलंबन लेता है, उस आलंबन की स्मृति जरूरी है। यदि स्मृति दुर्बल है तो वह ध्यान भी नहीं कर पाता। ध्यान का प्रारम्भिक अर्थ है-सतत स्मृति। एक आलम्बन पर सतत स्मृति का रहना एकाग्रता है। उस काल में दूसरी स्मृति न आए। दूसरी स्मृति आते ही एकाग्रता खंडित हो जाती है। यदि हम स्मृति पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लेते हैं तो एकाग्रता सधती जाती है। हम देखते हैं-स्मृति का चक्र चलता रहता है। एक के बाद दूसरी और दूसरी के बाद तीसरी, चौथी स्मृति उभरती रहती है और अतीत अनावृत होता जाता है। यदि हम ध्यानकाल में स्मृति पर नियंत्रण रख लेते हैं, जिस स्मृति को हमने पकड़ा है, वह स्मृति निरन्तर बनी रहे, दूसरी स्मृति न आए तो यह स्मृति का सातत्य एकाग्रता बन जाता है। एकाग्रता ध्यान है। इसलिए ध्यान करने वाले व्यक्ति के लिए मन के इस रूप को पकड़ना जरूरी हो जाता है।

मन को जीतने का उपक्रम

हम कहते हैं-मन को जीतो। प्रश्न होता है-मन को जीतने का तात्पर्य क्या है?मन पकड़ में नहीं आता, फिर उसको कैसे जीता जाए?मन को जीतने का पहला अर्थ है-सतत स्मृति का अभ्यास, एक ही स्मृति पर दीर्घकाल तक टिक जाना। मन का कार्य है-स्मृतियों को सतत बदलते रहना। जब हम एक ही स्मृति का काल दीर्घ कर लेते हैं तब मन का कार्य गौण हो जाता है और अपनी चेतना का प्रभुत्व स्थापित हो जाता है। सतत स्मृति का एक अर्थ है शेष की विस्मृति। यह सतत स्मृति का फलित है। सतत स्मृति और विस्मृति का योग-यह मन पर पहली विजय है।

कल्पना और ध्यान

कल्पना के बिना भी ध्यान नहीं होता। कोई न कोई कल्पना का सहारा लेना होता है। निर्विकल्प ध्यान प्रारम्भ में अत्यन्त कठिन होता है। पहले कल्पना करनी होती है, फिर वह कल्पना चाहे स्थूल की हो या सूक्ष्म की। हमने एक कल्पना ली-हम विशाल प्रांगण में बैठे हैं और अपने आपको विशाल रूप में अनुभव कर रहे हैं। यह व्यापकता की कल्पना है। कल्पना की-हम रूई से भी अधिक हल्के हो गए हैं या शीशे की भांति अत्यन्त भारी हो गए हैं। ये सारी कल्पनाएं ध्यान में सहयोगी बनती हैं। जैसी कल्पना होती है वैसा अनुभव भी होने लग जाता है। प्रश्न होता है कि इसका लाभ क्या है?जब हम एक कल्पना में अपनी चेतना का नियोजन कर देते हैं तब शेष सारी कल्पनाएं और विकल्प रूक जाते हैं। यह है कल्पना को संकल्प में बदलना। यह मन पर हमारी दूसरी विजय है।

विचार और ध्यान

विचार का चक्र भी चलता रहता है। वह सतत गतिशील रहता है, रूकता नहीं। एक के बाद दूसरा विचार आता रहता है। विचार में स्मृति और कल्पना-दोनों का योग होता है। विचार का काम है स्मृतियों और कल्पनाओं को लेकर आगे बढ़ना। जब हम ध्यानकाल में कल्पना और स्मृति पर नियंत्रण स्थापित कर लेते हैं तब विचार भी नियंत्रित हो जाते हैं। विचार कैसे चल पाएगा?उसे आहार ही प्राप्त नहीं हो रहा है। विचार का आहार है-स्मृति और कल्पना। जब आहार बंद हो गया तो विचार भी रूक जाएगा, विचार का नियमन हो जाएगा। विचार का नियमन होना मन पर तीसरी विजय है।

जब तक स्मृति, कल्पना, विचार या चिन्तन को नहीं समझा जाता तब तक ध्यान की वस्तु-स्थिति को भी नहीं समझा जा सकता।

मन की तीन अवस्थाएं

मन की तीन अवस्थाएं है-विक्षेप, एकाग्रता और अमन। विक्षेप की अवस्था में स्मृतियों, कल्पनाओं और विचारों का सतत विचरण होता रहता है। एक स्मृति के बाद दूसरी स्मृति, एक कल्पना के बाद दूसरी कल्पना और एक विचार के बाद दूसरा विचार-यह क्रम चलता रहता है। यह विक्षेपावस्था की स्थिति है।

मन की दूसरी अवस्था है-एकाग्रता। एकाग्रता का अर्थ है-एक स्मृति पर टिके रहना, एक कल्पना या विचार पर स्थिर रहना, एक ही विषय का चिन्तन करते रहना।

मन की तीसरी अवस्था है-अमन। लोग स्थिरता को मन की तीसरी अवस्था मानते हैं। यह भ्रान्त मान्यता है। मन की प्रकृति ही है चंचलता। उसमें स्थिरता कैसे आएगी? मन को अमन बनाना, यह तीसरी अवस्था हो सकती है। अमन का अर्थ है-मन को उत्पन्न ही नहीं होने देना। मन स्थाई तत्त्व नहीं है। वह उत्पन्न होता है और विनरूट हो जाता है। जब व्यक्ति स्मृति, कल्पना और विचार से मुक्त होता है, सर्वथा निर्विकल्प और निर्विचार अवस्था में चला जाता है, तब अमन की स्थिति प्राप्त होती है। उस स्थिति में मन नहीं होता, क्योंकि उसके तीनों घटकों-स्मृति, कल्पना और विचार का वहां अस्तित्व नहीं है।

मन के स्वरूप की यह संक्षिप्त चर्चा है। ❒

चित्र से चरित्र पर असर

संतों की संगति से जीवन में बदलाव आ सकता है। पापी भी त्यागी बन सकता है। संतों की सन्निधि में सुखानुभूति और शांति मिल सकती है। आदमी को यथासंभव अच्छे लोगों की संगति करने का प्रयास करना चाहिए। संतों की संगति से बुद्धि की जड़ता समाप्त हो सकती है, वाणी में सच्चाई आ सकती है, मान-सम्मान बढ़ सकता है, कीर्ति फैल सकती है। आदमी को अपने भावों को अच्छा बनाने का प्रयास करना चाहिए। चित्र से चरित्र पर असर पड़ता है। इसी प्रकार संगति का असर आदमी के जीवन और व्यवहार पर पड़ता है। आदमी को अच्छे लोगों की संगत करने का प्रयास करना चाहिए।

-आचार्य महाश्रमण

दर्शन-सम्पन्नता से क्या मिलेगा ?

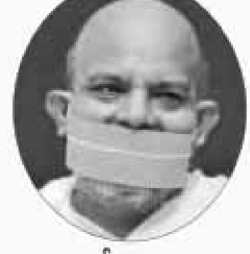

आचार्य महाश्रमण

प्रश्न किया गया-दंसणसंपन्नयाए णं भंते! जीवे किं जणयइ?भंते! दर्शन-सम्पन्नता (सम्यक्-दर्शन की संप्राप्ति) से जीव क्या प्राप्त करता है?उत्तर दिया गया-दंसणसंपन्नयाए णं भवमिच्छत्तछेयणं करेइ, परं न विज्झायइ। अणुत्तरेणं नाणदंसणेणं अप्पाणं संजोएमाणे सम्मं भावेमाणे विहरइ। दर्शन-सम्पन्नता से वह संसार-पर्यटन के हेतुभूत मिथ्यात्व का उच्छेद करता है-क्षायिक सम्यक् दर्शन को प्राप्त होता है। उससे आगे उसकी प्रकाश-शिखा बुझती नहीं। वह अनुत्तर ज्ञान और दर्शन से अपने आपको संयोजित करता हुआ, उन्हें सम्यक् प्रकार से आत्मसात् करता हुआ विहरण करता है।

दर्शन जगत की दो मुख्य धाराएं है-आस्तिक दर्शन और नास्तिक दर्शन। जहां नास्तिक दर्शन पुनर्जन्म, परलोक, आत्मा, पुण्य-पाप के फल आदि को स्वीकार नहीं करता है। वहीं आस्तिक दर्शन में आत्मा के त्रैकालिक अस्तित्व को स्वीकार किया गया है। पुनर्जन्म, पुण्य-पाप के फल, कर्मवाद और मोक्ष को भी माना गया है। नास्तिक दर्शन के प्रमुख आचार्य चार्वाक ने स्पष्ट कहा-आगे-पीछे कुछ नहीं है। यह लोक उतना ही है जितना हमारे सामने है। परलोक जैसी कोई चीज नहीं है। इसलिए यह बेकार की कष्ट साधना नहीं करनी चाहिए। जब शरीर को जला दिया जाएगा फिर वापिस कौन आएगा। इसलिए आगे चिंता मत करो। जो कुछ करना हो यही कर लो।

आस्तिक दर्शन में बताया कि यह जीवन बहुत छोटा है। यहां है वही सब कुछ नहीं है। तुम आगे के बारे में सोचो। इस अल्पकालिक जीवन का कोई भरोसा नहीं, कब क्या हो जाए?आज एक बच्चा है उसको 80 या 100 वर्ष आएंगे या नहीं ?बीच में भी कुछ हो सकता है। जिसको जितने वर्ष आ गए वो तो आ गए। आगे कितने आयेंगे यह कहना कठिन है। इसलिए तुम आगे को देखो और उस परम मोक्ष को देखो जहां पहुंचने के बाद परम सुख/अनन्त सुख मिलेगा। ऐसा सुख जो अव्याबाध होगा, जिसका कभी अन्त नहीं होगा।

एक समस्या है। कोई कहता है परलोक है, पुनर्जन्म है और कोई कहता है पुनर्जन्म नहीं है। आखिर आदमी कौनसी बात को स्वीकार करे। आदमी को यह ध्यान देना चाहिए कि मुझे जीवन में गलत कार्य नहीं करने है। अच्छे कार्य करने हैं। परलोक होगा तो अच्छे काम का अच्छा फल मिल जाएगा। अगर परलोक नहीं भी है तो कौनसा नुकसान हो जाएगा। इसलिए परलोक है तो भी अच्छा काम करना ठीक है और परलोक नहीं है तो भी अच्छा काम करना ठीक है।

आस्तिक विचारधारा ने कहा कि पुनर्जन्म है। संदेह होने पर भी पुनर्जन्म को मानकर जीवनशैली का निर्धारण करना चाहिए। पुनर्जन्म को बताने वाली घटनाएं भी मिलती है। जहां प्राचीन साहित्य में पूर्वजन्म की घटनाएं मिलती है वहां आधुनिक साहित्य में भी कितने-कितने बच्चों की पूर्वजन्म की घटनाएं प्राप्त होती है। मैं यह नहीं कहता कि जो बातें प्राप्त होती हैं वे सब बातें सत्य ही है। फिर भी कुछ ऐसी घटनाएं पूर्वजन्म, पुनर्जन्म के अस्तित्व को सिद्ध करने में योगभूत बन सकती है।

सूत्रकार ने कहा कि दर्शन-संपन्नता से भव मिथ्यात्व का छेदन हो जाता है। हमारी आत्मा अनन्त काल से संसार में भ्रमण कर रही है। वह अनंत काल तक मिथ्यात्व में ही रहती है। वैसे देखा जाए तो मूल घर मिथ्यात्व ही है। भगवान् महावीर के पूर्वजन्मों को देखें। उनको सम्यक् दर्शन तो नयसार के भव में मिला। पहले अनन्तकाल तक मिथ्यात्व में रहे। सम्यक् दर्शन की प्राप्ति से अनंतकाल के साथी मिथ्यात्व का छेदन हो जाता है और क्षायक सम्यक्त्व की प्राप्ति हो जाती है। क्षायिक सम्यक्त्व एक बार आ जाने पर वापिस कभी नहीं जाता है। क्षयोपशम सम्यक्त्व वापिस जा सकता है, उपशम सम्यक्त्व वापिस जा सकता है। सम्यक्त्व की अवस्था में आचार का पालन किया जाता है। उसका बड़ा फल होता है। मिथ्यात्व की अवस्था में आचार का पालन किया जाता है। उसका ज्यादा फल नहीं होता। तामली तापस ने मिथ्यात्व की अवस्था में जितने लम्बे काल तक बेले-बेले की तपस्या की, अगर वही सम्यक्त्व की अवस्था में करता तो उतनी तपस्या में तो सात जीवन मुक्ति में चले जाते। परन्तु वह मिथ्यात्व अवस्था में की इसलिए ज्यादा फल नहीं मिल सका। सम्यक्त्व की अवस्था में साधना करने का मतलब है अंक के आगे शून्य लगाना। जैसे एक अंक के आगे शून्य लगाते जाएं तो संख्या में कितना वजन जा जाता है। दस, सौ, हजार, लाख, करोड़, अरब, खरब आदि आगे कितनी बढ़ जायेगी। एक अंक है तो शून्य का मूल्य है। अंक बिना केवल शून्य हो या अंक के पहले शून्य हो तो उनका क्या मूल्य होगा। सम्यक्त्व तो अंक के समान हे। वह अंक है फिर आचार की साधना की जाए तो कितना फल मिलेगा। अंक नहीं है फिर संवर की साधना के रूप में तपस्या आदि का विशेष फल नहीं मिलता। इसलिए अध्यात्म की साधना में सम्यक्त्व को बहुत ऊंचा स्थान दिया गया है।

उत्तराध्ययन सूत्र में कहा गया-

नादंसणिस्स नाणं, नाणेण विणा न हुंति चरणगुणा।
अगुणिस्स तत्थि मोक्खो, नत्थि अमोक्खस्स निव्वाणं।।

पहला प्रश्न-निर्वाण किसे मिलता है?

उत्तर-जिसे मोक्ष प्राप्त होता है। उसे निर्वाण प्राप्त होता है।

दूसरा प्रश्न-मोक्ष किसे मिलता है?

उत्तर- जिसके पास चारित्र का गुण है। उसे मोक्ष प्राप्त होता है।

तीसरा प्रश्न-चारित्र की प्राप्ति किसे होती है?

उत्तर-जिसके पास सम्यक् ज्ञान है। उसे सम्यक् चारित्र की प्राप्ति होती है।

चौथा प्रश्न-सम्यक् ज्ञान किसे होता है?

उत्तर-जिसके पास सम्यक् दर्शन है। उसी का ज्ञान सम्यक् होता है।

निर्वाण के मूल में सम्यक्त्व है। सम्यक् दर्शन है तो निर्वाण भी कभी मिल सकेगा। वह नहीं है तो निर्वाण भी नहीं मिलेगा।

सूत्रकार ने कहा कि दर्शन-सम्पन्नता से भव मिथ्यात्व का छेदन हो जाता है और सम्यक्त्व प्राप्त हो जाता है। एक बार वह दीप शिखा दिख गई, प्रकाश रश्मि प्राप्त हो गई, वह फिर कभी भी बुझेगी नहीं। जैसे-बल्ब, ट्यूबलाइट आदि जलते हैं किन्तु लाइट चली जाती है तो वो बुझ जाते हैं। दीये में लौ जलती है किन्तु कुछ तेज हवा आदि आने से वह लौ बुझ सकती है। उसी प्रकार ढ़ीला-ढ़ाला या हल्का-फुल्का सम्यक्त्व होता है। वह थोड़ी-सी परिस्थिति सामने आने पर समाप्त हो जाता है। मन विचलित हो जाता है, आस्था टूट जाती है। क्षायिक सम्यक्त्व मजबूत होता है। उसमें आस्था नहीं डोलती है। क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति होना अनंतकाल की यात्रा में एक महानतम उपलब्धि होती है। क्षायिक सम्यक्त्व आने के बाद मोक्ष में ज्यादा देरी नहीं होती, बहुत जल्दी केवलज्ञान, केवलदर्शन प्राप्त हो जाता है।

आदमी का दृष्टिकोण सम्यक् होना चाहिए। जो जैसा है, उसे वैसा समझना चाहिए। यथार्थ तत्त्वदर्शनम् यथार्थ तत्त्व को जानना, पहचानना और स्वीकार करना चाहिए। मेले लगते हैं, उसमें बच्चे कागज के रंगीन चश्मे खरीदते हैं। कोई लाल चश्मा खरीदता है और जब आंखों पर लगाता है तो उसे दुनिया लाल दिखने लग जाती है। कोई पीले या हरे रंग का चश्मा लगाता है। उसे दुनिया पीली और हरी दिखने लगती है किन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि दुनिया लाल, पीली या हरी हो गई। जो जैसा चश्मा लगा लेता है उसे वैसा ही दिखने लग जाता है। सम्यक् दर्शन सम्पन्न आदमी जो जैसा है उसे वैसा ही स्वीकार करता है। हम लोग गुरुधारणा करवाते हैं। वह व्यावहारिक सम्यक्त्व की दीक्षा है। उसमें शुद्ध देव, शुद्ध गुरु और शुद्ध धर्म को स्वीकार किया जाता है।

देव : वह राग-द्वेष मुक्त आत्मा, जो केवलज्ञान सम्पन्न होती है तथा तीर्थंकर होती है।

गुरु : साधु, जो पांच महाव्रतों का पालन करते हैं। सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र की आराधना करते है।

धर्म : वह सिद्धान्त और तत्त्व, जो वीतराग/केवलज्ञानी द्वारा निर्दिष्ट है। इसके साथ-साथ हम कुछ नियम भी दिलाते हैं ताकि जीवन अच्छा रह सके।

जैन तत्त्वविद्या के अनुसार तत्त्व नौ हैं-जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आश्रव, संवर, निर्जरा, बंध, मोक्ष। इन तत्त्वों को समझ लिया जाए तो सम्यक्त्व की सम्पुष्टि हो सकती है, दृष्टिकोण सम्यक् बन सकता है। मूल बात है-आदमी की दृष्टि कहां टिकी हुई है, ध्यान कहां पर है?अगर आदमी का ध्यान आत्मा या मोक्ष में है तो समझना चाहिए वह सम्यक्त्वी है अथवा सम्यक्त्व की ओर अग्रसर है। यदि आदमी का ध्यान दिन-रात भोगों में ही रहता है। आत्मा, पुनर्जन्म, पुण्य-पाप आदि की कोई अवधारणा नहीं, इसका मतलब है अभी मिथ्यात्व का रोग लगा हुआ है, मिथ्यात्व मोह का आवरण आया हुआ है। यह मिथ्यात्व का रोग तभी दूर होगा जब सम्यक् दर्शन प्राप्त होगा। दर्शन-सम्पन्नता से मिथ्यात्व का हमेशा के लिए विच्छेद हो जाता है और क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त हो जाता है। आदमी अनुत्तर ज्ञान, दर्शन से सम्पन्न बन जाता है।

❒

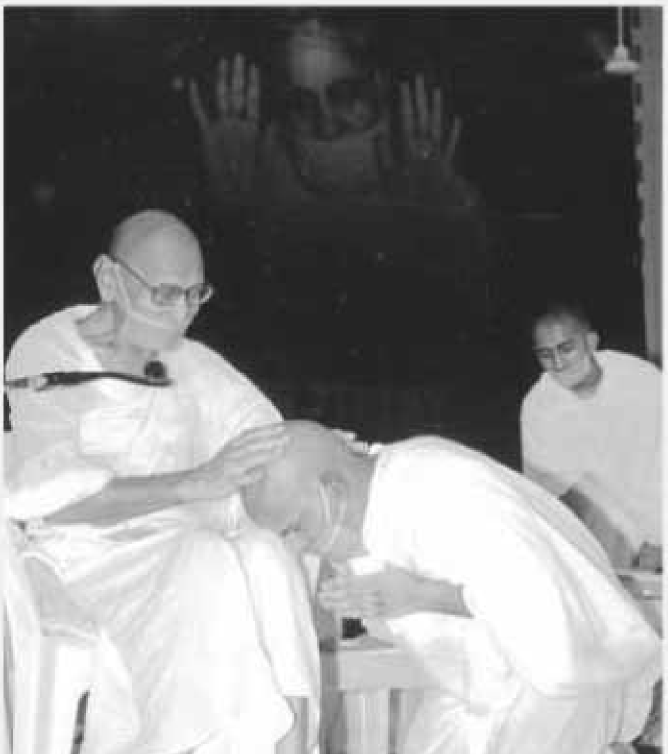

प्रेक्षाध्यान की अंतिम कला-आत्म साक्षात्कार

शरीर आत्मा नहीं, श्वास आत्मा नहीं, श्वास दर्शन आत्मा नहीं। जब आत्मा तक पहुंचना हो तो सिर्फ आत्मा को ही देखें, लेकिन अंदर जाना होगा तो पहले दरवाजे से ही प्रवेश करना होगा। इस दृष्टि से शरीर आत्मा से भी ज्यादा महत्वपूर्ण हो गया। धड़े और पानी में कौन ज्यादा महत्वपूर्ण। घड़ा आधार और पानी आधेय। हमें शरीर को भी देखना है, उसके बिना आत्म दर्शन नहीं हो सकता। श्वास शरीर की एक असाधारण कला है। देखना भी एक कला है। भरत चक्रवर्ती ने शीश महल में अपने मुंह व आकृति पर मन को केन्द्रित कर इतने आत्म तल्लीन हो गए कि उन्हें केवल ज्ञान हो गया। हम भी अपनी प्रेक्षा करें, शरीर की भी प्रेक्षा करें। शरीर को नई दृष्टि से देखना विशेष बात है। धारणा, ध्यान और समाधि। किसी देश विशेष पर चित्त को केन्द्रित करना धारणा, उसमें एकलयता ध्यान व आत्मस्थ होना समाधि। चैतन्य केंद्र प्रेक्षा हमारे शरीर के लगभग 150 मर्म स्थानों जहाँ आत्म प्रदेश बहुत सघन होते हैं, उन पर अपने ध्यान को केन्द्रित करना हमारी विकास का हेतु होता है।

-आचार्य श्री महाश्रमण

बदले जीवन शैली

❁ साध्वी प्रमुखा कनकप्रभाजी

मानव जीवन दुर्लभ है। ऋषि-महर्षियों ने कहा है कि मानव जीवन दुर्लभ चिन्तामणि रत्न के समान होता है। कुछ लोग मानव जीवन का मूल्य नहीं समझते। कुछ लोग खाना, पीना और सोना इतनी ही सीमा में जीवन जीते हैं। कुछ लोग सार्थक श्रम न कर जुआ, ताश, चौपड़, शराब आदि में अपना जीवन गुजार देते हैं। कुछ लोग मानवीय मूल्यों से हटकर हिंसा, शोषण, अत्याचार, आतंक आदि राष्ट्रविरोधी एवं नीतिविरोधी गतिविधियों में अपना जीवन नष्ट कर देते है। कुछ अशिक्षित और निर्धन लोग आपसी कलह, द्वेष, आचारहीनता, आचरणहीनता आदि कुप्रवृत्तियों एवं कुचेष्टाओ के कारण पशुओं से भी गया-बीता जीवनयापन करते हैं। दुर्लभ चिन्तामणि रत्न की कीमत जानने के लिए पारखी नजर चाहिए अन्यथा संयोग एवं सुयोग से मिला हुआ यह जीवन-रत्न कौडी के मोल के बराबर भी नहीं रहता।

जीवन को सुगन्धिमय और सौरभमय बनाना मनुष्य के अपने हाथ में है। वातावरण से अच्छे तत्त्व जुटाकर हम अच्छी जीवन-शैली का जीवन जी सकते हैं। हमें मनुष्य जन्म मिला है और हम इस जीवन को सफल बनाना चाहते हैं, यह मनोवृत्ति व्यक्ति को अच्छी जीवन-शैली की ओर मोड़ देती है। कुछ सार्थक और कुछ उद्देश्यपूर्ण कार्य करने के लिए जागृत विवेक चेतना मनुष्य को अच्छी जीवन शैली की ओर अग्रसर कर देती है।

यूं तो मनुष्य जिस परिवेश में रहता है, जिस प्रकार के पारिवारिक संस्कारों को ग्रहण करता है, उसकी जीवन शैली उसी के अनुरूप हो जाती है। कुछ लोगों के जीने का अपना अलग किस्म का अंदाज होता है, उनकी जीवन शैली उनकी निजी मनोवृत्तियों के अनुसार ढल जाती है। वर्तमान समय की जीवन शैली विज्ञान के चमत्कारों से पूरी तरह प्रभावित दिखाई पड़ती है और कदम-कदम पर सुविधावाद के बेल-बूंटे उस पर टंके हुए मालूम पड़ते हैं। कदम-कदम पर प्रतियोगिताएं हैं। चारों ओर भाग दौड़ है। हिंसा का माहौल बढ़ा है। आतंक का खतरा निरन्तर मंडरा रहा है। मनुष्य जब तक अपनी जीवन शैली को नहीं बदलेगा, तब तक उसे युगीन समस्याओं का समाधान भी नहीं मिल सकता।

जीवन शैली के मुख्यतः दो स्वरूप होते हैं-अन्तर्मुखी जीवन शैली और बहिर्मुखी जीवन शैली।

अंतर्मुखी जीवन शैली में विश्वास करने वाले व्यक्ति त्याग, संयम एवं सद्वृत्तियों का जीवन जीना पसन्द करते हैं। वे अपने जीवन का एक लक्ष्य निर्धारित करके चलते हैं। लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उन्हें कभी-कभी युग की धारा से हटकर भी चलना पड़ता है। धारा के प्रतिकूल या धारा की विपरीत दिशा में चलना काफी कठिन होता है परन्तु जिसके दिल में कुछ करने का जज्बा होता है, उन्हें धारा का रूख मोड़ना पड़ता है।

बहिर्मुखी जीवन शैली में विश्वास करने वाले व्यक्ति समाज एवं परिवार में चल रही जीवन शैली का अनुकरण करते हैं। दुनिया की धारा जिस ओर बह रही होती है, उस ओर वे अपने आपको मोड़ देते है। जो काम दूसरा, तीसरा, चौथा व्यक्ति कर रहा होता है, उसकी देखा-देखी वे अपनी जीवन-शैली को ढाल लेते हैं। आज प्रायः समाज का हर व्यक्ति धन की दौड़ में शामिल है, हर व्यक्ति सुख-सुविधा के साधनों को जुटाने की होड़ में लगा हुआ है, हर व्यक्ति श्रम की बूंदों को बहाने के बदले सुविधावाद को प्रश्रय दे रहा है, लोग एक-दूसरे की देखा-देखी इसी अनुश्रुति में बह रहे हैं। ये अपने एवं अपने परिवार के लिए भौतिकवाद का भले ही अम्बार खड़ा कर दें परन्तु कर्तव्य की रेखाएं नहीं खींच सकते।

यदि आप कुछ होना चाहते हैं, कुछ बनना चाहते हैं, किसी विशेष लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते हैं, तो आपको प्रतिस्त्रोतगामी बनना होगा। प्रतिस्त्रोतगामी बनने का अर्थ है कि आपको सुख-सुविधावाद को छोड़ना होगा और श्रम-प्रधान जीवन शैली को अपनाना होगा। भोगप्रधान जीवन-शैली को त्यागकर त्याग-प्रधान जीवन शैली को स्वीकारना होगा। असंयम की दिशा में ले जाने वाली जीवन शैली को छोड़कर संयम-प्रधान जीवन शैली की ओर प्रस्थान करना पड़ेगा। वैचारिक स्तर पर चिन्तन करने के बाद आप इस आदर्श को स्वीकार करेंगे कि संयम की मूल्यवत्ता अधिक है अतः संयम-प्रधान जीवन शैली भी अधिक उपयुक्त है। संभव है कि आप इस ओर कुछ समय के लिए प्रवृत्त भी हो जाए, परन्तु जब आप दुनिया के अधिकांश लोगों को सुविधा-साधनों की दिशा में भागते हुए देखेंगे तो आपकी मानसिकता भी कमजोर पड़ जाती है और आप अपनी जीवन शैली का रूख दुनिया की धारा के साथ मोड़ देते हैं।

वर्तमान समय में हम देख रहे हैं कि जीवन-मूल्यों में ह्रास आया है। एक समय था जबकि भारतीय जीवन शैली की एक अलग पहचान थी, उसका सामाजिक नैतिक एवं सांस्कृतिक मूल्य था और भारतवासी उस जीवन-शैली के कारण दुनिया में विशेष रूप से प्रतिष्ठित थे। ये अनुशासन, सहनशीलता, करूणा, संयम, श्रमशीलता, सौहार्द, सहयोग-भावना आदि अनेक सात्विक गुणों की प्रतिष्ठा उनके जीवन में थी और व्यवहार के धरातल पर उनकी उन्नत एवं शिष्ट जीवन शैली में मानवता के दिव्य स्वरूप के दर्शन होते थे। विज्ञान की चकाचौंध और सुख-सुविधावाद ने हमारी उस जीवन शैली को धीरे-धीरे समाप्त कर दिया। आज हम संवेदनाशून्य जीवन जी रहे हैं और संस्कारों व सद्वृत्तियों के धरातल से काफी दूर हो गए है। उस जीवन शैली की अर्थवत्ता एवं मूल्यवत्ता सदियों और युगों तक बनी रही है। उस ओर से विमुख होकर हम सभ्यता और शिष्टता के कौन से प्रतिमान खड़े कर पाएंगे, यह कहना कठिन है। शान्ति एवं सद्भावपूर्ण जीवन जीने का अरमान हर युग में हर व्यक्ति का रहा है और वह उसे पूरा करता आया है परन्तु जीवन मूल्यों के टूटे-बिखरे ध्वंसावशेषों के बीच हम शान्ति और सद्भाव को ढूंढ़ने और पाने की अभिलाषा करेंगे तो हमें निराशा के सिवाय और कुछ भी हाथ नहीं लगेगा।

एक वह समय था जब घर में संतान पैदा होती थी तो उसे बड़े-बुजुर्ग जन्मघूंटी पिलाते थे, दादा-दादी संस्कारों की शिक्षा देते थे, रात को सोने से पहले बच्चों को शिक्षाप्रद कहानियां सुनाते थे। आज सारी बातें इतिवृत्त बनकर रह गई। अब तो बच्चा थोड़ा-सा समझदार होते ही सेलफोन, आईपेड, रेडियो, कम्प्यूटर, इंटरनेट आदि से जुड़ जाता है। उसके मासूम दिमाग में वे संस्कार नहीं पहुंच पाते जिनकी उसको प्रारम्भिक अवस्था में जरूरत थी। उसकी जीवन शैली प्रारम्भिक काल से ही बदल गई। विकृतियों का समावेश शुरूआती दौर से ही प्रारम्भ हो गया। हालांकि माता-पिता ज्ञान-विज्ञान की दिशा में अभिरूचि रखने वाले बच्चे से शीघ्र ही संतुष्ट हो जाते हैं परन्तु वही बच्चा जब यौवन काल में अपने करतब दिखाता है तब माता-पिता अनुभव करते हैं कि उसे संस्कारों की शिक्षा भी देना आवश्यक था। संस्कारों के अभाव में शुष्क, रूक्ष एवं मूल्यहीन जीवन शैली पनपती है और वह पारिवारिक एवं सामाजिक परिवेश को निराशा और बेगानेपन से भर देती है।

आज जीवन-शैली में आमूलचूल बदलाव की अपेक्षा है। उसे बदलने के लिए घर-परिवार का माहौल बदलना होगा, समाज की व्यवस्थाएं बदलनी होगी, देशव्यापी स्तर पर व्यवस्थाओं में सुधार करना होगा। एक अकेले व्यक्ति की जीवन शैली के बदलाव से नहीं, बल्कि जन-जन की जीवन-शैली के परिवर्तन के

अभियान से एक स्वस्थ चेतना का जागरण होगा। हृदय परिवर्तन और व्यवस्था परिवर्तन दोनों को संयुक्त करके ही जीवन शैली के बदलाव की कल्पना साकार की जा सकती है। पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी ने कहा-

'बदले हृदय, व्यवस्था बदले, बने विधायक दृष्टि,
नहीं निषेधक भाव बढ़े, यह सम्यग्दर्शन सृष्टि,
अविवेकी अंधानुकरण की क्यों हो वृत्ति विषैली,
जैनी जीवन शैली।।'

प्रायः हर धर्म संस्कार और मानवीय मूल्यों का पक्षधर है। धर्मगुरु एवं धर्मनेता समाज को इस हेतु निरन्तर प्रतिबोध देते हैं। समाज के समझदार लोग प्रेरित होकर सम्यक् जीवन शैली अपनाने के लिए संकल्पित भी होते हैं, परन्तु जब वे धर्मस्थान को छोड़कर वापस अपनी दुनिया में लौटते हैं तो अपनी प्रतिज्ञाएं भूल जाते हैं। उनके हृदय-परिवर्तन की संकल्प-शक्ति कमजोर पड़ जाती है अथवा काफूर हो जाती है।

जीवन शैली को सम्यक् बनाने के लिए यदि राज्य स्तर पर विधि-विधान बना दिए जाएं तो केवल कानून और डंडे के बल पर संभव है कि कुछ तात्कालिक परिवर्तन हो परन्तु उसकी निष्पत्ति स्थायी नहीं होगी। राज्यसत्ता को भी जन-चेतना को समझना पड़ता है। अधिकतर लोग सुधारवाद में विश्वास नहीं करते। जो हो रहा है-उसमें अधिकतर लोग संतुष्ट हो जाते हैं। अतः समूहगत समर्थन न मिल पाने के कारण राज्यसत्ता भी अभियान को अपेक्षित गति नहीं दे पाती। जीवन शैली के औचित्य-अनौचित्य की जानकारी जन-जन को होगी, तभी चेतना की लौ प्रदीप्त हो सकेगी।

चीन के एक दार्शनिक संत अपनी कुटिया में बैठे थे। एक दिन एक व्यक्ति घोड़े पर सवार होकर उनके पास आया और अपनी एक जिज्ञासा रखी। उसने संत से यह बताने का अनुरोध किया कि स्वर्ग क्या है और नर्क क्या है?संत ने व्यक्ति को ऊपर से नीचे तक देखा और पूछा 'तुम कौन हो, तुम्हारा परिचय क्या है?' व्यक्ति ने अकड़कर कहा 'मैं इस साम्राज्य का सेनापति हूं।' संत ने सेनापति की अकड़ को पकड़ा और कहा 'तुम सेनापति हो?चेहरे से तो लगते ही नहीं। शक्ल से तो भिखारी मालूम पड़ते हो।' सेनापति को गुस्सा आया और उसने म्यान में से तलवार खींच ली। संत ने यह देखकर कहा 'तलवार है। लोहे की है क्या?इसमें धार है क्या?क्या इसे चलाना जानते हो?क्या तुम्हारी कलाई में इतनी ताकत है कि तुम तलवार से गर्दन पर वार कर सको?' सेनापति इतना गुस्से से भर गया और तलवार को उसने कसकर पकड़ लिया। ऐसा लगा कि वह अब वार करने ही वाला है। संत ने क्रोध से आग बबूला हुए सेनापति को देखकर कहा 'सेनापति यही नर्क है। नर्क का द्वार यहीं से खुलता है।' सेनापति इतना सुनते ही स्तब्ध रह गया । उसने सोचा कि अरे! मैंने एक संत के साथ कैसा व्यवहार कर दिया। उसने सिर झुकाकर तलवार को वापस म्यान में डाला और तलवार संत के चरणों में रख दी। वह संत के पैरों में सिर रखकर रोने लगा। संत ने उसे उठाया और कहा 'सेनापति! यही स्वर्ग है। विवेकशीलता, संयम और सहनशीलता से ही स्वर्ग का द्वार खुलता है।'

परिस्थितियों के थोड़ा-सा भी प्रतिकूल होने पर या मन के अनुकूल कोई बात न होने पर हम क्षण भर में ही मानसिक संतुलन खो बैठते हैं। सद्वृत्तियों को जीवन में समुचित रूप से विकसित न कर पाने से ऐसी विषम स्थितियां आ जाती है जहां कालचक्र हमारे सम्पूर्ण जीवन को उलटा करके छिन्न-भिन्न कर सकता है। आवश्यकता है उस जीवन शैली की जो सद्वृत्तियों का आलोक चेतना में संचारित करे और जीवन मूल्यों की आधारशिला पर मनुष्य का सम्यक् विकास करे।

हमारी जीवन शैली कैसी हो, इस संदर्भ में विचारकों ने निम्न चार को इसके लिए आवश्यक माना है-

1. Peaceful - शान्तिपूर्ण-हर व्यक्ति अपने जीवन को शान्तिपूर्ण बनाना चाहता है। केवल अपने आप में जीना या सिर्फ अपने लिए जीना, यही शान्ति नहीं है। घर, परिवार और समाज के प्रति अपना अच्छी तरह ये दायित्व निभाकर चैन की नींद सोएं, यही शान्ति है। ऐसा नहीं कि आपके पास सारा सामर्थ्य है, फिर भी आप असीम की प्राप्ति के लिए रात-दिन दौड़ते चले जा रहे हैं। फिर आपको शान्ति कहां से मिलेगी?भौतिकवाद और सुख-सुविधावाद की कहीं-न-कहीं तो सीमा करनी होगी, तभी आप शान्तिप्रधान जीवन जी सकते है।

2. Purposeful - उद्देश्यपूर्ण-हर व्यक्ति के जीवन का कुछ लक्ष्य होता है लक्ष्य के लिए व्यक्ति प्रयास करता है और लक्ष्य को पूरा भी करता है। हम अपने लक्ष्य को बार-बार बदलते रहें तो हमारा जीवन असंतुलित और असफल हो जाएगा। पहले मुख्य लक्ष्यों को पूरा करें, फिर गौण लक्ष्यों को। सफलता कदम-दर-कदम आपके निकट होगी।

3. Productive -सृजनात्मक-हर व्यक्ति कुछ-न-कुछ विशेष कार्य करना चाहता है, कुछ-न-कुछ नयी रेखाएं खींचना चाहता है। यह संभव भी है। आज दुनिया में इतना विकास हुआ है, यह सृजनात्मकता का ही उदाहरण है। मानवीय मूल्यों को सुरक्षित रखते हुए हम सृजनात्मक की ओर बढ़ें। प्रगति की राह यही है।

4. Progressive -विकासात्मक-विकासात्मक से तात्पर्य है कि पहले महीने से हम जितना काम कर पाएं, उससे अधिक हम दूसरे माह में करें। हर महीने हम कार्य की बारीकियों से अवगत होकर अच्छे-से-अच्छे और अधिक-से-अधिक काम करने का प्रयास करें।

वर्तमान में आवश्यक बदलाव लाकर आप एक सम्यक् जीवन शैली अपनाएं और जीवन की सार्थकता सिद्ध करें।

❐

With Best Compliments from

भलाई का काम करो, भगवान की सच्ची भक्ति हो जाएगी। तुम्हें अच्छी शक्ति मिल जाएगी।
—आचार्य महाश्रमण

श्रद्धावनत

आचार्यश्री महाश्रमणजी के चरणों में शत्-शत् नमन

हंसराज बैताला

छोटी खाटू-भागलपुर

लेश्या द्वारा व्यक्तित्व रूपान्तरण

❁ मुमुक्षु डॉ. शान्ता जैन

लेश्या का कर्मशास्त्रीय विमर्श व्यक्तित्व रूपान्तरण की प्रेरणा है। कर्मों की दस अवस्थाओं में उद्वर्तना, अपवर्तना, संक्रमण, उदीरणा आदि अवस्थाएं व्यक्ति के पुरुषार्थ की अपेक्षा रखती है। साधना की विविध पद्धतियों द्वारा मूर्च्छा के टूटने पर शुभ लेश्यायें जागती है और व्यक्तित्व बदलता है।

साधना की श्रेणियों में उपशम श्रेणी वाला साधक आवेगों, संवेगों, अभिवृत्तियों को दबाता हुआ आगे बढ़ता है और क्षपक श्रेणीवाला जड़ से इन्हें उखाड़ देता है। यद्यपि हमारे लिए अभीष्ट क्षपक श्रेणी की ही प्रक्रिया है पर उपशम श्रेणी से भी एक सीमा तक व्यक्तित्व समायोजित होता है। जैनदर्शन मनोविज्ञान की तरह दमन को अवांछनीय नहीं मानता, अपितु वह दमन की प्रक्रिया से धीरे-धीरे शोधन की ओर बढ़ने की उत्प्रेरणा जगाता है।

शोधन द्वारा व्यक्ति के बाहरी और भीतरी दोनों व्यक्तित्व रूपान्तरित होते हैं। व्यक्तित्व बदलाव की प्रक्रिया में मनोविज्ञान में बताई गई निर्देशन, सम्मोहन, मनोविश्लेषण, आस्था आदि विधियां और जैन साधना पद्धति में निर्देशित तप, कायोत्सर्ग, अनुप्रेक्षा, प्रतिक्रमण और श्रद्धा की चर्चा उपलब्ध होती है।

व्यक्तित्व बदलाव के सन्दर्भ में ध्यान प्रक्रिया अपनी विशिष्ट भूमिका रखती है। ध्यान संवर और निर्जरा की पद्धति है। इससे पुराने संस्कारों का प्रक्षालन होता है तथा नए कर्म-संस्कारों का मार्ग अवरूद्ध होता है। योगों की चंचलता समाप्त होती है। इन्द्रियां नियंत्रित और कषाय उपशमित होती है। यह निवृत्तिप्रधान जीवन का निर्माण करता है। इसमें प्रासंगिक रूप से ध्यान के भेद, प्रभेद, ध्यान की पूर्व तैयारी आदि के संबंध में विमर्श आवश्यक है।

जैन-दर्शन में ज्ञान, तपस्या, ध्यान, सभी के साथ लेश्या-विशुद्धि की बात जुड़ी है। इसके बिना सारे प्रयत्न व्यर्थ है। लेश्या विशुद्धि के लिए भावों के प्रति जागरूकता अपेक्षित है। रूपान्तरण भावजगत/लेश्याजगत की घटना है। जब भाव बदलता है तो विचार अपने आप बदल जाता है। जब विचार बदलता है तब विचार के पीछे चलने वाला व्यवहार भी बदलता है।

व्यक्तित्व रूपान्तरण का प्रारम्भ स्थूल शरीर की यात्रा से होता है। धीरे-धीरे सूक्ष्म का स्पर्श करता है। इस सन्दर्भ में प्रेक्षाध्यान की आध्यात्मिक वैज्ञानिक प्रक्रिया विमर्शनीय है। इसका आधार है आगम साहित्य व्याख्या ग्रंथ तथा उत्तरवर्त्ती साहित्य में आए हुए ध्यान विषयक प्रकरण। ध्यानाभ्यास की इस पद्धति में प्राचीन दार्शनिकों से प्राप्त बोध एवं साधना को आधुनिक वैज्ञानिक सन्दर्भों में प्रतिपादित किया गया है।

साधना का मुख्य सूत्र है-'जानो और देखो।' हम जैसे-जैसे देखते जाते हैं, वैसे-जैसे जानते चले जाते हैं। देखना वह है, जहां केवल चैतन्य सक्रिय होता है। जहां प्रियता और अप्रियता का भाव आ जाए, राग-द्वेष उभर जाए, वहां देखना-जानना गौण हो जाता है। प्रेक्षाध्यान पद्धति में हम बिना प्रियता-अप्रियता के जानने-देखने का अभ्यास करते हैं।

कायोत्सर्ग, श्वास-प्रेक्षा, शरीर-प्रेक्षा, समवृत्ति-श्वासप्रेक्षा, चैतन्यकेन्द्र-प्रेक्षा, लेश्या-ध्यान, ये सारी जीवन रूपान्तरण की प्रक्रियाएं है।

रंगध्यान : जैन साधना पद्धति में चैतन्य केन्द्रों पर रंगध्यान का प्रयोग बहुत प्राचीनकाल से होता रहा है। शास्त्रों में महामंत्र के पांच विशिष्ट केन्द्रों पर पांच रंगों के साथ ध्यान करने का निर्देश मिलता है।

ध्यान करते समय धुंधले, भद्दे और अमनोज्ञ विद्युत विकिरणों को निष्प्रभावी बनाने हेतु स्पष्ट, चमकीले रंगों का प्रयोग मनोवैज्ञानिक प्रभाव दिखाता है।

आत्मा शरीरव्यापी होने के कारण चैतन्य पूरे शरीर में व्याप्त है। किन्तु कुछ ऐसे स्थान हैं जहां पर चैतन्य की सघनता है। ऐसे स्थान विशेष चैतन्य केन्द्र कहे जाते हैं। ये ज्ञान और शक्ति की अभिव्यक्ति के मुख्य स्त्रोत है। इनमें रंगों का अस्तित्व व्याप्त है।

जब तक चैतन्य केन्द्रों का जागरण/निर्मलीकरण नहीं होता, व्यक्ति अशुभ लेश्या/भावों में जीता है। इनके शुद्धिकरण हेतु ज्ञानकेन्द्र, ज्योतिकेन्द्र, दर्शनकेन्द्र, विशुद्धिकेन्द्र व आनन्दकेन्द्र पर क्रमशः पीत, श्वेत, अरूण, नीला एवं हरे रंग का ध्यान किया जाता है। आधुनिक मनोवैज्ञानिकों एवं चिकित्सकों ने इस बात को स्वीकृति दी है कि मस्तिष्क एवं सुषुम्ना पर किए गए रंगों के प्रयोग अधिक प्रभावी होते हैं, क्योंकि ये ऊर्जा-स्त्रोत हैं।

इस ग्रन्थ में लेश्या ध्यान की चर्चा व्यक्तित्व बदलाव के सन्दर्भ में की गई है, क्योंकि यह जीवन से सीधा जुड़ा पक्ष है। स्वस्थ व्यक्तित्व के विकास के लिए जरूरी है कि हम शुभ लेश्याओं द्वारा शारीरिक, मानसिक और उपाधिजनित दोषों का प्रक्षालन करें। मनोवैज्ञानिक चिकित्सा विधियों के साथ रंगों द्वारा भावचिकित्सा विधि को भी अवश्य जोड़ा जाए जिससे चैतसिक निर्मलता प्राप्त हो सके।

लेश्या और रंग-मनोविज्ञान में लेश्या के सभी पक्षों को छूने का प्रयत्न किया गया है। यद्यपि विशाल एवं गहन लेश्या के ज्ञान को पूर्णता से पकड़ पाना संभव नहीं, क्योंकि ज्ञान असीम है और बुद्धि की अपनी सीमा है। फिर भी लेश्या के अध्ययन में विविध रंगों और मानव व्यक्तित्व पर उसके मनोवैज्ञानिक पक्ष को उजागर करने का उद्देश्य रहा है। यद्यपि बहुत कुछ शेष रह गया है मगर आशा और विश्वास है कि भविष्य में शेष को अशेष बनाने का प्रयास गतिशील रहेगा।

ध्यान और स्वाध्याय का महत्व

साधना की दृष्टि से ध्यान और स्वाध्याय का बहुत महत्त्व होता है। दोनों साधना के विशेष प्रकार हैं। स्वाध्याय और ध्यान की संपत्ति के द्वारा परमात्मा को प्रकाशित किया जा सकता है। एक साधक को गुस्सा, हिंसा आदि का परित्याग कर देने का प्रयास करना चाहिए। आदमी को दूसरे प्राणियों को अभयदान देकर अपने द्वारा किसी भी प्रकार की प्राणी की हत्या न हो, ऐसा प्रयास करना चाहिए। अहिंसा माता होती है। अहिंसा से शांति की प्राप्ति हो सकती है। इसलिए आदमी को अहिंसा का पालन करते हुए अपने जीवन को अच्छा बनाने का प्रयास करना चाहिए।

आचार्य महाश्रमण

प्रेक्षा-कथा

संपादक - मुनि दुलहराज

खोना ही साधना

शिष्य ने पूछा, 'गुरुदेव! आप लम्बे समय से साधना कर रहे हैं। इतने लम्बे समय में आपने क्या पाया?'

'वत्स! कुछ भी नहीं पाया। बहुत कुछ खोया है, पाया कुछ भी नहीं।' 'यह कैसे, गुरुदेव?'

'वत्स! आज तक मैंने जो साधना की उसमें खोया ही खोया है। अब तक खोता चला जा रहा हूं। खोना ही मेरी साधना है।' यह किसी की समझ में आए या न आए, गुरु ने बहुत बड़े सत्य को छोटे से उत्तर में प्रकट किया। हमें पाना कुछ भी नहीं है। हम जो पाना चाहते हैं, वह हमारे पास है। वह हमारे भीतर पहले ही विद्यमान है। जो बाहर से लेता है, वह खाली हो जाता है। जो भीतर को अनावृत करता है, वह पा लेता है। खोने का अर्थ है-निर्जरा करना।

नामान्तरण

एक सेठ के घर दो पंडित आए। एक पंडित कार्यवश इधर-उधर गया तो सेठ ने दूसरे से पहले का परिचय पूछा। उसने कहा, 'मेरा अधिक सम्पर्क नहीं है, अभी साथ हुए थे। लगता है यह तो बना-बनाया बैल है।' पहला पंडित आया तो दूसरा किसी कार्यवश बाहर गया। उससे दूसरे पंडित का परिचय पूछा गया तो उत्तर मिला, 'यह तो पंडित क्या है, गधा है।' सेठ ने भोजन के समय एक के सामने चारा और एक के सामने भूसा रख दिया। पंडितों ने अपना अपमान समझा। सेठ ने कहा, 'मुझे तो यही परिचय मिला था।' दोनों पंडितों के सिर झुक गए। मानसिक शान्ति का एक महत्त्वपूर्ण सूत्र है-सहिष्णुता। यह प्रमोद भावना का अंग है। गुणी के गुणों को देख मन में प्रसन्न होना प्रमोद भावना है।

वाक्-कला

राजा की सभा में एक ज्योतिषी आया। राजा ने अपना भविष्य जानना चाहा। ज्योतिषी ने देखा और उदास हो गया। राजा ने कहा, 'उदास क्यों हो?' बोलो, 'जैसा हो वैसा हो।' ज्योतिषी ने कहा, 'राजन्! बात अशोभनीय है। पर आप जानना चाहते हैं, तो मुझे बताना ही होगा। आपके देखते-देखते आपका सारा परिवार काल-कवलित हो जाएगा।'

राजा ने सुना। वह अत्यन्त कुपित हो गया। उसने ज्योतिषी को देश से निकाल दिया। कुछ दिनों बाद एक दूसरा ज्योतिषी आया। राजा ने उसे भविष्य बताने के लिए कहा। उसने कहा, 'राजन! आप बड़े सौभाग्यशाली हैं। आप लम्बे समय तक जीएंगे। आप चिरायु होंगे। अपने समूचे परिवार में आप दीर्घायु होंगे।'

राजा प्रफुल्लित हो उठा। उसने ज्योतिषी को बहुत इनाम दिया। दोनों ज्योतिषियों के तथ्य में कोई अन्तर नहीं है। कहने का प्रकार भिन्न है। कुशल वह है, जो बोलना जानता है।

चारों ओर का खिंचाव

एक श्रेष्ठी के दो पत्नियां थीं। दो पत्नियां होना और लड़ाई होना दो बातें नहीं है। वह बारी-बारी से दोनों के पास जाता था। एक नीचे के तल में रहती थी और दूसरी ऊपर के तल में। एक दिन भूल हो गयी और वह ऊपर जाने के लिए सीढ़ी पर चढ़ने लगा। बारी नीचे वाली की थी। उसने पैर पकड़कर कहा, 'ऊपर कैसे जाते हो?आज बारी नहीं है।' ऊपर वाली को पता चला उसने हाथ पकड़कर कहा, 'ऊपर चढ़ गए, अब नीचे कैसे जाओगे?'

ऊपर से हाथ खींचा जा रहा है और नीचे से पैर खींचे जा रहे हैं एक ऊपर की ओर खींचती है, दूसरी नीचे की ओर। इस खींचातान में श्रेष्ठी का शरीर छिल गया। दोनों ओर से खींचा-तानी ने उसकी हालत बुरी बना दी।

चित्त के अनेक खंड है और जितने खण्ड हैं, उतने ही आकर्षण। एक खण्ड इधर तानता है, तो दूसरा खण्ड उधर। इस स्थिति में उन लोगों की क्या हालत होती होगी, जो चारों ओर से खींचे जाते हैं।

किसने कहा मन चंचल है ?

❁ डॉ. वचनदेव कुमार

अनादिकाल से ही भारतवर्ष में योग की साधना प्रचलित रही है। फलतः योग विषयक धारणाओं के स्पष्टीकरण के प्रयत्न में ढेर सारी पुस्तकों का लेखन किया गया। आचार्यश्री महाप्रज्ञ-कृत 'किसने कहा मन चंचल है ?' योग-सम्बद्ध विषयों के आवश्यक उपादानों की चर्चा से समन्वित एक ऐसी पुस्तक है जो साधना, ध्यान, तपस्यादि की जटिलतम और उलझी हुई कड़ी को सरलतम व्याख्या के द्वारा सहज-सरल भाषा में सुस्पष्टता प्रदान करती है।

साधना की उच्च भावभूमि में प्रविष्ट होकर सफलता की उपलब्धि कर लेना कम दुष्कर और दुरूह कार्य नहीं। साधना, ध्यान अथवा तपस्या एक ऐसी प्रणाली है, ऐसी प्रक्रिया है, शान्ति-प्राप्ति का एक ऐसा सक्षम मार्ग है, जिसकी सफलता एक दिन में सम्भव नहीं, इसके निमित्त सतत प्रयत्नशील और सचेष्ट रहने की जरूरत है। वर्षों साधना में लीन रहने के बावजूद साधक, साध्य की प्राप्ति में असफल ही रहता है। लेकिन इतना-भर तय है कि अपने उद्देश्य की सिद्धि में साधक सफल हो सकता है-अगर नियमानुकूल सदाचरण में बंधकर वह साधना के प्रति समर्पित भाव रखे।

आज का मानव-समुदाय निरन्तर भौतिक उपलब्धियों के प्रति साकांक्ष रहता है। उसकी प्रतीति ऐसी है कि जीवन की समस्त एषणाओं और कामनाओं की परितुष्टि भौतिक सम्पदाओं के माध्यम से ही हो सकती है, परन्तु मनुष्य जिस वेग और तीव्रता के साथ भौतिकता के पीछे दौड़ रहा है, वह उतना ही अशान्त और उलझनों में फंसता जा रहा है। वस्तुतः अगर व्यक्ति सुख-शान्ति का आकांक्षी है, उसका अन्वेषी है तो निश्चित तौर पर उसे आध्यात्मिकता के घेरे का संस्पर्श करना होगा, उसमें प्रविष्ट होकर सुख-शान्ति की खोज करनी पड़ेगी।

प्रस्तुत पुस्तक में जिन-ध्यान-सूत्रों की चर्चा उपलब्ध होती है, जिन प्रयोगों की ओर पाठक का ध्यान आकृष्ट किया गया है, अगर उसे अमल में लाने का प्रयत्न मानव-जाति करे तो उसमें दुःखों और कष्टों से उबरने की क्षमता उत्पन्न हो सकती है और वह सुखपूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर सकता है। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन-काल में सुख-शान्ति की प्रबल आकांक्षा से परिचालित होता है।

पुस्तकीय सामग्री का विभाजन तीन खण्डों में, शिविरों के आयोजन के क्रमानुसार, किया गया है। इन तीन खण्डों-दर्शन का नया आयाम, शक्ति-जागरण, मानसिक प्रशिक्षण में अलग-अलग विषय-सूत्रों पर प्रकाश डाला गया है। ज्ञातव्य है कि समय-समय पर प्रेक्षा-ध्यान के शिविर आयोजित होते है। उनमें ध्यान के प्रयोग चलते हैं और साथ-साथ ध्यान के विषय में चर्चा भी चलती है। उक्त तीन खण्डों को पुष्टता प्रदान करने के निमित्त प्रथम खण्ड के अन्तर्गत नौ, द्वितीय खण्ड के अन्तर्गत दस तथा तृतीय खण्ड के अन्तर्गत बारह उपशीर्षक समाविष्ट है।

प्रथम खण्ड के प्रत्येक उपशीर्षक के विषय का प्रारम्भ ध्यान-सूत्रों से किया गया है, जिसका हिन्दी-रूपान्तर भी प्रस्तुत है। पश्चात् इसके हिन्दी के वाक्यों में ध्यान-सूत्रों को मूल-मंत्रों को निबद्ध किया गया है। पुनः उन्हीं बिन्दुओं का विवेचन-विश्लेषण उदाहरण सहित किया गया है। ये सूत्र-वाक्य पाठक के मन में यह बोध उत्पन्न करने में समर्थ हैं कि किस उपशीर्षक में किन विषयों की विवेचना प्रस्तुत की गयी है। विवेचित विषय के मूल तत्वों की जानकारी इन सूत्रों से भी उपलब्ध होती है। द्वितीय और तृतीय खण्ड में प्राकृत के ध्यान-सूत्रों का उल्लेख प्राप्त नहीं होता, मात्र हिन्दी में ही विषय से सम्बद्ध मूल-तत्वों अथवा आवश्यक विचार-बिन्दुओं को उपस्थित करने का प्रयत्न किया गया है।

प्रथम-खण्ड सम्यक् दर्शन, संयम, अप्रमाद, समता, तप, आध्यात्मिक सुख, सत्य की खोज आदि विषयों का आलेख प्रस्तुत करता है। द्वितीय खण्ड शक्ति-जागरण के विविध-सूत्रों का संधान तो करता ही है साथ ही शक्ति-जागरण के मूल्य और प्रयोजन, मानसिक तनाव का विसर्जन, मानसिक सन्तुलन, अध्यात्म की यात्रा, आजादी की लड़ाई, साधना की निष्पत्ति आदि विषयों की प्रस्तुति भी करता है। तृतीय खण्ड मानसिक प्रशिक्षण भावधारा से जुड़ा हुआ है, जिसके अन्तर्गत चेतना का तीसरा आयाम, मानसिक शक्ति का विकास और उपयोग, व्यक्तित्व का नव-निर्माण, मानसिक स्वास्थ्य, अध्यात्म का रहस्य-सूत्र, अध्यात्म और व्यवहार पर अभिमत प्रकट किया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक में इस सत्य को स्थापित करने का प्रयत्न किया गया है कि मन की चंचलता ही समस्त अवगुणों को उत्पन्न करने वाली है। अगर इसकी चंचलता को अवरूद्ध कर दिया जाए, इसे स्थिरता प्रदान किया जाना अगर सम्भव हो सके तो व्यक्ति विविध अवगुणों और दोषों के जाल से उबर सकता है। मायावी और छद्मवेषधारी संसार, व्यक्ति को अपने झूठे आकर्षण में आजीवन कैद करना चाहता है। मनुष्य अपनी अज्ञानता-वश उस कथित आकर्षण में इस प्रकार लिप्त हो जाता है कि अन्य कष्ट-निवारक मार्गों का अनुसंधान नहीं कर पाता और न ज्ञानियों और योगियों द्वारा निर्देशित पथ का अनुसरण ही कर पाता है।

साधक के लिए विवेक-चेतना के जागरण के साथ-ही-साथ साधना-क्षेत्र में सफल होने के लिए नाड़ी-संस्थानों का परिज्ञान भी आवश्यक है। पुस्तक में तपस्या के अर्थ की व्याख्या नये सिरे से उपस्थित की गयी है। तपस्या का अर्थ शरीर क्षीण करना नहीं। 'शक्ति का ह्रास जिससे हो वह धर्म का कार्य नहीं हो सकता।'

संयम की साधना-विधि पर भी विचार किया गया है। कृतिकार ने बताया है कि प्रमाद के कारण व्यक्ति को अपनी अनन्त शक्ति का बोध नहीं हो पाता।

प्रमाद से आच्छादित हो जाने पर चेतना लुप्त हो जाती है। इस सन्दर्भ में प्राचीन साधकों की प्रणालियों तथा तीर्थंकरों के आचार-व्यवहार की भी चर्चा की गयी है। जगह-जगह पर पुस्तक में महावीर, बाहुबली, पंतजलि जैसे साधकों की साधना और उनके सदाचरण के द्वारा इस बोध को जागृत करने की चेष्टा की गयी है कि वे सभी अपनी अनन्त और अजस्त्र शक्तियों से भलीभांति परिचित और जानकार थे। सहिष्णुता, संयमशील आदि गुणों से उनका व्यक्तित्व आपूरित था।

आज का साधक तत्क्षण परिणाम की आकांक्षा से विकल, बेचैन हो उठता है। परिणामतः उसे सफलता की प्राप्ति नहीं होती, उसकी साधना भंग हो जाती है। पुस्तक-प्रणेता के विचारानुसार विपरीत और प्रतिकूल परिस्थितियों में भी साधक को गम्भीर और धैर्यवान बना रहना चाहिए। साध्य तक पहुंचने के लिए साधक को ध्यान में विशिष्ट दक्षता प्राप्त करने की जरूरत होगी। इसके लिए कुछ ध्यान-सूत्रों का सहयोग आवश्यक है, जिसके माध्यम से उसमें शक्तियों का विकास होता है। शक्ति सुषुप्तावस्था में रहती है, फलतः उसे जागृत करने के लिए साधक को सजग-सावधान रहना चाहिए।

चेतना के विकास की उच्चतम भूमि तक पहुंचने में एक लम्बी यात्रा तय करनी पड़ती है। यात्रा के इन सभी पड़ावों की पुस्तक में सविस्तार चर्चा की गयी है। ऊर्जा की ऊर्ध्वयात्रा के विभिन्न पहलुओं को भी स्पष्टता प्रदान की गयी है। शक्ति-जागरण तथा मानसिक प्रशिक्षण के विविध आयामों को भी उजागर करने का प्रयत्न है।

पुस्तक जैन-धर्म से प्रेरित और प्रभावित है। विषय की गम्भीरता और दुरूहता को बोध-गम्य बनाने के निमित्त वैसे सरल, सहज और सम्प्रेषण उदाहरणों का प्रस्तुतीकरण किया गया है, जिनका सम्बन्ध मानव के दैनन्दिन में आने वाली वस्तुओं तथा पारिवारिक-सामाजिक जीवन से जुड़े हुए सन्दर्भों से है। कुछ वैसे उदाहरणों की प्रस्तुति भी की गई है, जिसके अन्तर्गत आधुनिक वैज्ञानिकों के विचारों को समाविष्ट किया गया है। स्थान-स्थान पर शरीर-वैज्ञानिकों, मनोवैज्ञानिकों, तर्क-शास्त्रियों की अवधारणाओं का भी विवेचन-क्रम में सन्निवेश किया गया है। आधुनिक विकसित जीवन में हम जिस परिवेश और वातावरण में अपना समय व्यतीत करते हैं, उसी परिवेश के बीच से उदाहरणों को मणिकार की भांति चुनकर सुगुम्फित किया गया है।

आधुनिक वैज्ञानिक व्याख्या के सन्निवेश के कारण ही पुस्तक में रोचकता और आकर्षण का निर्माण सम्भव हो सका है। अत्याधुनिक विचारों और सन्दर्भों से जुड़े हुए उदाहरणों के समायोजन से योग, साधना, तपस्या, ध्यान जैसे क्लिष्ट विषय को समझने के लिए माथा मारने की जरूरत नहीं होती। इस प्रकार के जटिल विषय के बीच भी वाक्य अपने कथ्य की अभिव्यक्ति वेगवती नदी की तरह करते चले जाते हैं और पाठक तन्मयतापूर्वक उसी तीव्र और प्रखर धार के साथ प्रवाहित होता हुआ दिखलायी पड़ता है।

यद्यपि पुस्तक सम्प्रदाय-विशेष की चेतनागत प्रवृत्तियों से प्रवाहित और अनुप्रेरित है, फिर भी सम्प्रदायेतर व्यक्तियों के लिए भी यह पुस्तक पठनीय है। आधुनिक सन्दर्भों को दृष्टिपथ में रखकर ही पुस्तक के पठन-क्रिया में आद्योपान्त रोचकता-सरसता का अनुभव तो होता ही है साथ-ही-साथ कुछ विषयेतर ज्ञान-विवर्धन करने वाले तथ्यों की सुस्पष्ट जानकारी भी प्राप्त होती है। पुस्तक के वाक्य छोटे-छोटे पर बिहारी के दोहे की तरह 'घाव करैं गम्भीर' वाली उक्ति को चरितार्थ करते हैं। ये वाक्य पूर्णतया विषय-प्रतिपादन में अतीव सक्षम और समर्थ है। प्रतीत होता है कि जैसे शब्दों का सुनियोजन माप-तौल कर किया गया हो। विषय-प्रतिपादन की विशिष्ट शैली, शब्द-चयन, वाक्य में शब्दों का संगुम्फन, वाक्य-संरचनादि कृतिकार के विलक्षण प्रतिभा-ज्ञान के परिचायक है। पुस्तक-पठन की परिसमाप्ति के पश्चात् भी पाठक इस भाव से परिबद्ध हो जाता है कि वह स्वयं पूरी तरह से उक्त विषयों में निष्णात है।

पुस्तक जिस प्राचीन भावधारा से संचालित होकर विषयों की सुस्पष्टता के लिए नवीन व्याख्याओं का आधार ग्रहण करती है, वह सर्वथा स्तुत्य और श्लाघनीय है।

❐

अशुभ कर्मों से बचें

शुभ-अशुभ कर्मों के कारण आत्मा संसार में परिभ्रमण करती रहती है। आत्मा कभी नरक में तो कभी तिर्यंच, कभी मनुष्य तो कभी देव योनियों में कर्म के आधार पर भ्रमण करती है। इसलिए अपने कर्मों पर विशेष ध्यान देते हुए आदमी को अशुभ कर्मों से बचने का प्रयास करना चाहिए तथा अपने जीवन के समय को शुभ कार्यों अथवा धार्मिक कार्यों में नियोजित करने का प्रयास करना चाहिए ताकि उसकी आत्मा और जीवन दोनों का कल्याण हो सके।

आचार्य महाश्रमण

प्रेक्षा-दर्शन

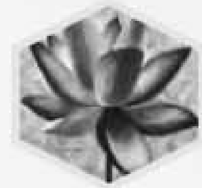

हमारे जीवन के भी दो पक्ष

जैसे चन्द्रमा के दो पक्ष होते हैं-कृष्ण और शुक्ल। वैसे ही हमारे जीवन के भी दो पक्ष हैं-कृष्ण और शुक्ल। कृष्ण पक्ष हमारे अनिष्ट कर्मों का सूचक हैं, अनिष्ट वातावरण का सूचक हैं, तामस वृत्तियों का सूचक है। शुक्ल पक्ष हमारे विकास का सूचक है, बंधनमुक्ति की ओर अग्रसर होने का सूचक है।

Just as there are two faces of the moon-dark fortnight and bright fortnight, our life has two faces too. The dark represents bad karma-negative tendenceies. The bright indicates positiveness, and the process of liberation from the bondages of karma.

अन्तःकरण में बदलाव जरूरी

जब तक अन्तःकरण नहीं बदलता, आदमी भीतर से नहीं बदलता, तब तक बाहरी परिवर्तन हो जाने पर भी बहुत कुछ परिवर्तन नहीं होता।

Real chage is possible only through inner transformation. Just outward change has no significance.

सबंधों को तोड़ना, अयोग करना ही हितकर है

सभी आचार्यों ने शब्द चुना 'योग'। उन्होंने कहा-योग साधना करो। भगवान महावीर ने कहा-नहीं, अयोग की साधना करो। योगों को समाप्त करो, संबंधों को तोड़ो। बाहर ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जो अपने लिए हितकर हो, हम सब अपने आप में परिपूर्ण हैं। सब सबंधों को तोड़ना, अयोग करना ही हितकर है। अन्तिम शिखर है-अयोग।

Many Acharyas picked upon the buzzward 'Yoga' and recommended that it be practised. Lord Mahaveer however preached non-yoga. He said, 'Free yourself from all relationship. There is nothing outside that is of any use to you. You are fully equipped and complete in your own person. So renounce and discard. Non-yoga is the ultimate creed.

सत्यांश के द्वारा सत्य को नहीं समझा जा सकता

सत्यांश को पूर्ण सत्य मानकर हम सत्य की खोज के द्वार को बन्द नहीं कर सकते। अनेकांत के सिद्धान्त ने सत्य की खोज के द्वार को सदा के लिए, सबके लिए खोल दिया। उसका प्रतिपाद्य है-सत्य की खोज मैं भी कर सकता हूं, तुम भी कर सकते हो। उसका साक्षात्कार भी हम सब कर सकते हैं। हमारे पूर्वजों ने सत्य की खोज की, उसका साक्षात् किया और प्रतिपादन भी। सत्य की खोज और साक्षात्कार उनका अपना विषय है और प्रतिपादन हमारे लिए है। हम उनके प्रतिपादन को ही मानकर चलें, सत्यांश के द्वारा ही सत्य को समझने का प्रयत्न करें, इससे बड़ा असत्य कोई नहीं हो सकता। सत्यांश के द्वारा सत्य को नहीं समझा जा सकता। उसके द्वारा सत्य की जिज्ञासा उत्पन्न हो सकती है, किन्तु सत्य को अपनी साधना के द्वारा ही उपलब्ध किया जा सकता है।

Seek absolute truth, the whole truth. Don't be content with partial or relative truth. The doctrine of Anekant has thrown open the quest for truth by annocuncing that everyone is free to seek that which our ancestors sought and realised. The absolute and whole truth can be realised only by spiritual practices.

With Best Compliments from

प्रेक्षाध्यान का प्रायोजन है अतेंद्रिय चेतना का विकास करना। अतेंद्रिय चेतना का अनुभव बहुत लोग नहीं करते। उन्हें पता भी नहीं चलता और करने वाला बता भी नहीं सकता कि उसका स्वाद कैसा है? उसका अनुभव कैसा है?

-आचार्य महाप्रज्ञ

श्रद्धावनत

अरविन्द संचेती

अहमदाबाद

प्रेक्षा फाउंडेशन संबद्धता प्राप्त केन्द्र सूची

स्थान का नाम	समन्वयक का नाम	सम्पर्क सूत्र
लाडनूं	डा. विजयश्री शर्मा	8233344482
मैहरोली	श्री मुकेश कुमार	9643300655
कोबा	श्री बाबूलाल सेखानी	9825033201
कूचबिहार	श्री जयचंद दुगड़	9434213099
राजकोट	श्री चन्द्रकान्त कोटेचा	9824043363
चेन्नई	श्री माणिकचंद रांका	9440205427
नागपुर	श्री आनंदमल सेठिया	9373471831
अम्बाबाड़ी	श्री संतोष सुराणा	9426087220
इन्दौर	श्री राजेन्द्र मोदी	9993465883
सूरत	श्री जयन्तीलाल कोठारी	9377555545
विक्रोली	श्री मिश्रीमल चौधरी	9869990868
कांदीवली	श्री पारसमल दुगड़	9004937723
कांदीवली	श्री विमलादेवी दुगड़	9004798179
दामोदरवाड़ी, कांदीवली	श्री पारसमल दुगड	9004937723
अशोकनगर कांदीवली	श्री पारसमल दुगड	9004937723
गौहाटी	श्री निर्मल चौरड़िया	9435042723
रायपुर	श्री सुरेन्द्र ओसवाल	9425285121
चेन्नई	श्रीमती प्रियंका बोहरा	9840845337
बैंगलोर	श्रीमती पुष्पा गन्ना	9686366250
गंगाशहर	श्री जैन लूणकरण छाजेड़	9887914000
मणिनगर, कांकरिया	श्री उम्मेद कोचर	9426412624
अल्थान, उधना	श्री मदनलाल दुधेड़िया	9427113136

ध्यान से होती है व्यापार-शुद्धि

साध्वी राजीमती

व्यापार गृहस्थ जीवन की अनिवार्य अपेक्षा है। इस आवश्यकता की पूर्ति में कई सफल होते हैं और कई असफल। सफलता में अहं जागता है और असफलता में आत्मविश्वास टूटता है। कभी-कभी तनाव अवसाद की स्थिति बनती है। इसलिए हर एक व्यापारी को जीवनचर्या के साथ ध्यान को जोड़ना चाहिए। प्रश्न हो सकता है कि व्यापार से ध्यान का क्या संबंध है जबकि ध्यान तो आत्म-साक्षात्कार के लिए किया जाता है। वर्तमान युग में इस प्रश्न का समाधान कबसे हो चुका है।

भोजन हमारे शरीर के सभी अवयवों को एक साथ प्रभावित करता है, पुष्ट करता है वैसे ही ध्यान जीवन के सब क्षेत्रों को प्रभावित क्यों नहीं करेगा। आहार, विहार, विचार, व्यवहार-ये सब ध्यान से प्रभावित हो सकते हैं तो फिर व्यापार क्यों नहीं होगा। यदि कोई व्यापारी रोज ध्यान करता है तो वह वर्तमान के व्यावसायिक दोषों से बचने के साथ-साथ अतिरिक्त आर्थिक विकास भी कर सकता है। व्यापारी से ग्राहक अपेक्षा रखता है कि उसका चेहरा सदा मुस्कान भरा हो। आवेश, तनाव से मुक्त हो। यह सहज मानसिक प्रसन्नता की स्थिति ध्यान से संभव हो सकती है। जिनके पास असीम वैभव है, वे विलासी, सुविधावादी, क्रूर एवं अपराधी नहीं बनें, इसलिए व्यापार में ध्यान का प्रवेश अनिवार्य होता जा रहा है। व्यापार में धोखा भी चलता है।

ध्यान करने वाला धोखा नहीं दे, यह तो सामान्य बात है किन्तु वह धोखा खाता भी नहीं। उसका पवित्र आभामंडल सामने वाले को प्रभावित किए बिना नहीं रहता। व्यापारी में समय नियोजन की क्षमता भी चाहिए। यह क्षमता ध्यान से आती है। वह व्यर्थ के मनोरंजन में अपना समय नष्ट नहीं करता। उसके पास अपनी पहचान होती है। जो स्वयं को पहचानता है, वह समय को भी पहचानता है। समय में जीने से उसे कला प्राप्त होती है। आज के युग में धन-वैभव सब कुछ है, इस आस्था के कारण व्यापारी समाज में स्पर्धा बढ़ रही है और अनैतिक आचरण से वर्तमान उपभोक्ता संस्कृति ने सामाजिक अस्वास्थ्य को पनपने का, बढ़ने का अवसर दिया है। इस स्थिति में व्यक्ति को अंतर्मुखी बनाने का कारगर उपाय ध्यान से ही बन सकता है। धन बाहर से भरता है और ध्यान भीतर से। यदि यह आस्था समाज में सक्रिय रही तो एक व्यापारी में पूर्ण संतुलन देखा जा सकता है। लाभ और अलाभ में संतुलन बनाए रखने की क्षमता ध्यान से आती है।

ध्यान करने वाला व्यापारी संपूर्ण व्यापार जगत में एक नई क्रान्ति घटित कर सकता है। उसकी दिनचर्या, रहन-सहन, वार्तालाप, सोच और व्यवहार सभी सामान्य व्यापारी से भिन्न होंगे। एक दूसरे के प्रति संवेदनापूर्ण होंगे। वह समाज स्वावलंबी, सुखी और शान्ति की खोज करने वाला समाज होगा। ❑

जागरूकता के साथ चलें

आदमी को चलने में भी सावधानी रखने का प्रयास करना चाहिए। पूर्णरूप से जागरूकता के साथ चलने से आदमी हिंसा से भी अपना बचाव कर सकता है। तेज गति में दुर्घटना की संभावना अधिक होती है। आदमी को धर्म-ध्यान में भी समय लगाने का प्रयास करना चाहिए। सुबह के समय धार्मिक ग्रंथ, साहित्य, व्याख्यान आदि में लगाने का प्रयास करना चाहिए।

आचार्य महाश्रमण

कार्यक्षमता का विकास

❀ मुनि धर्मेश

एक उच्च अधिकारी सन्तों के दर्शनार्थ आये। बात-चीत के दौरान उन्होंने कहा कि मुनिश्री! पहले हम काम को बहुत जल्दी निपटा देते थे। अब स्थिति उल्टी हो रही है। पहले हमारे पास फाइलें कम होती थी। एकाग्रता अच्छी रहती। हम शीघ्र ही काम निपटा देते थे। अब जितनी फाइलें एक दिन में निपटाते हैं, दूसरे दिन फिर उतनी ही फाइलें नई आ जाती है। पदोन्नति के साथ अन्य कार्य और जिम्मेदारियां भी बढ़ रही है। ऐसी स्थिति में एकाग्रता और कार्यक्षमता में कमी आ रही हैं इसको कैसे रोका जाए?कार्य क्षमता को किस प्रकार बढ़ाया जाए?ये प्रश्न सभी प्रकार के व्यक्तियों के सामने उपस्थित होते हैं। कुछ लोग इस कमी को पहचान लेते हैं। रोकने का प्रयत्न करते हैं। कुछ लोग इसको पहचान नहीं पाते हैं। जैसा चल रहा है वैसा चलता रहता है। उनकी बेचैनी और परेशानियां बढ़ती जाती है। प्रश्न है इसको कैसे रोका जाए?

दायित्व वृद्धि : क्षमता की कमी

जीवन में सफलता के लिए कार्यक्षमता का विकास अत्यन्त आवश्यक है। इसका कर्मजा शक्ति/कार्यदायित्व/कार्य-कौशल या सतत पुरुषार्थ से बहुत गहरा संबंध है। वर्तमान में बौद्धिक क्षमता पर जितना ध्यान दिया जाता है उसका शतांश भी कार्यक्षमता के विकास पर ध्यान नहीं दिया जाता है। उम्र बढ़ने के साथ युवा अवस्था तक व्यक्ति पर पारिवारिक, सामाजिक, व्यावसायिक दायित्व भी बढ़ते जाते हैं। जिस अनुपात में दायित्व बढ़ते हैं उस अनुपात में कार्यक्षमता नहीं बढ़ती। यौवन ढलने के साथ शारीरिक, मानसिक शक्तियां भी ढलने लगती है। व्यक्ति जब बच्चा होता है तो उसके पास पढ़ने-लिखने, खाने-पीने, खेलने-कूदने आदि के अलावा और अन्य कोई विशेष जिम्मेदारी नहीं होती है। पढ़ाई पूरी करने के बाद पहला दायित्व होता है स्वावलम्बी बनने का। यदि विवाह हो गया है तो परिवार के पालन-पोषण की जिम्मेदारी भी बढ़ जाती है। जैसे-जैसे आयु बढ़ती है नई-नई चुनौतियां और कार्य सामने आने लगते हैं। कार्यक्षमता का पर्याप्त विकास होने पर व्यक्ति को सब कुछ सहज लगता है और वह आसानी से चुनौतियों का सामना करते हुए आगे बढ़ता जाता है। कार्य क्षमता के विकास के अभाव में व्यक्ति तनाव, व्यग्रता, बैचेनी, कुण्ठा या अवसाद जैसी समस्याओं से घिरता चला जाता है फलस्वरूप वह अपने आपको बोझिल अनुभव करता है। इन सब स्थितियों में व्यक्ति की कार्यक्षमता प्रभावित न हो, कार्यक्षमता बढ़ती रहे, क्या यह संभव है?

कार्यक्षमता का आधार

कार्य का परिणाम या उत्पादन-क्षमता व्यक्ति की कार्यक्षमता पर निर्भर है। यदि कार्यक्षमता अधिक है तो कम समय में सुन्दर व अधिक काम होगा। उत्पादन क्षमता (Operational Efficiency) अधिक होगी। कार्य क्षमता कम है तो अधिक समय लगाने पर भी काम कम होगा, जो होगा वह भी अच्छा नहीं हो सकेगा। आज के व्यावहारिक जीवन और व्यावसायिक क्षेत्र में सफलता के लिए कार्यक्षमता को अत्यन्त आवश्यक माना गया है।

व्यक्ति की कार्यक्षमता मुख्य रूप से दो बातों पर निर्भर है- (1) संबंधित क्षेत्र का नवीनतम ज्ञान (2) एकाग्रता।

ज्ञान

कार्यक्षमता में विकास के लिए जिस क्षेत्र में व्यक्ति काम कर रहा है उस क्षेत्र का उसको नवीनतम (Latest) ज्ञान अपेक्षित होता है। जैसे कोई कम्प्यूटर इंजीनियर है तो उसको अपने क्षेत्र की नवीनतम जानकारी की जरूरत होगी। अगर कोई चार्टड एकाउण्टेण्ट है तो उसको अपने क्षेत्र में हो रहे नित्य नवीन नियमों व नीतिगत परिवर्तनों से परिचित रहना होगा। यदि कोई डॉक्टर-सर्जन है तो उसे अपने क्षेत्र की नवीनतम तकनीक व शोधों को जानते रहना होगा। अन्यथा वह पिछड़ जाएगा। उसकी कार्यक्षमता प्रभावित होगी। सही निर्णय में भी कठिनाइयां आएगी।

एकाग्रता

किसी भी कार्यक्षमता के विकास का मूलभूत आधार मानसिक एकाग्रता है। इस एकाग्रता के आधार से ही व्यक्ति किसी भी कार्य की कार्य-प्रणाली का बोध एवं क्रियान्वयन सुगमता से कर लेता है। डॉक्टर, वकील, प्रोफेसर, कर्मचारी, प्रबन्ध निदेशक या गृहिणी भी क्यों न हो, सबको अपने कार्य को कुशलता से करने के लिए मानसिक एकाग्रता की अत्यन्त आवश्यकता होती है। ज्ञान तो अनेक लोगों को होता है कि क्या करना चाहिए?वस्तुतः उसको क्रियान्वित करने मे अनेक समस्याएं आ जाती है। यदि मानसिक एकाग्रता बिल्कुल नहीं है, साथ-साथ बेचैनी है, तनाव है, चिन्ता है, भय है तो काम में भी मन नहीं लगता है। अनेक लोग ऐसे भी होते है जो काम करने के लिए जाते जरूर हैं, पर कहते हैं कि काम मे मेरा मन नहीं लगता। उनके भीतर मन मे जो कुछ हो रहा है वह उसकी सम्पूर्ण कार्यक्षमता को प्रभावित कर देता है। कहावत है 'मन के हारे हार है और मन के जीते जीत'। जिसका मन टूट गया, मनोबल गिर गया, मानसिक परेशानियां जिस पर हावी हो गई फिर वह जो भी कार्य प्रारम्भ करेगा, वह या तो सही नहीं होगा या फिर कार्य पूरा ही नहीं करेगा, बीच में ही छोड़ देगा। वह अन्यान्य कार्यों से भी बचने की कोशिश करेगा।

एक क्रिकेट का खिलाड़ी पूरी एकाग्रता से खेलता है। दूसरे खिलाड़ी की एकाग्रता भंग हो जाती है। दोनों में क्या अन्तर है?पहला खिलाड़ी लम्बे समय तक सफलता से खेलने में समर्थ हो जाता है जबकि दूसरा एक-दो बॉल में ही पेवेलियन का रास्ता नाप लेता है। जहां एकाग्रता में कमी आती है, वहां पर ज्ञान व क्षमता होने पर भी कार्य कुशलतापूर्वक सम्पन्न नहीं हो पाता है। जो कार्य कर रहे हैं उसमें पूरी मानसिक शक्ति लगें। अतः आवश्यक है कि हम मन को प्रशिक्षित करें।

मानसिक प्रशिक्षण

मानसिक प्रशिक्षण का अर्थ है कि हम जिस कार्य को कर रहे हैं 'मन' उसी कार्य में लगा रहे, अन्य बातें उस समय दिमाग में नहीं आये, इस हेतु मन को प्रशिक्षित करना। जैसे-खाना खाएं तो मन केवल खाना खाने में रहे, चलें तो मन केवल चलने पर टिका रहे, बोलें तो केवल बोलने पर ध्यान रहे, सुनें तो केवल सुनने पर ही ध्यान जाए। यह मानसिक प्रशिक्षण है। इसे भाव-क्रिया भी कहते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो 'हर क्रिया' में मन का योग हो, वर्तमान क्षण का बोध रहे, कार्य को जानते हुए करें तथा सतत अप्रमत्त बने रहें। जो क्रिया चल रही है, हमारा पूरा भाव उसके साथ जुड़ा रहे। अगर मन और भाव इधर उधर भटक रहे हैं, कार्य हो रहा है और मन कहीं दूसरी ओर है, भावनाएं कहीं ओर हैं तो जो भी कार्य होगा वह अस्त-व्यस्त हो जाएगा। किस प्रकार मन को व्यवस्थित किया जाए?किस प्रकार मन को संतुलित और एकाग्र किया जाये?इसका समाधान केवल मानसिक प्रशिक्षण द्वारा ही संभव है। यदि हम इस बात को गौण

कर देते हैं, इसको कोई महत्व नहीं देते हैं तो इस स्थिति में केवल 20 प्रतिशत मानसिक शक्ति का ही सही उपयोग होगा शेष 80 प्रतिशत मानसिक शक्ति का अपव्यय मानसिक भटकाव में। ऐसी स्थिति में जो कार्य किया जाएगा वह कुशलता से सम्पन्न नहीं हो पाएगा, आपकी पूर्ण क्षमता उसमें नहीं लगेगी, आपकी कार्यदक्षता भी नहीं बढ़ेगी। यदि हम अस्थिरता, व्यग्रता, चंचलता, अधीरता पर नियंत्रण नहीं कर रहे हैं तो अपनी बहुत बड़ी हानि कर रहे हैं। केवल 20 प्रतिशत शक्ति से काम चला रहे हैं। 80 प्रतिशत शक्ति को अनावश्यक खर्च कर रहे हैं। इस स्थिति को बदलना है। 80 प्रतिशत शक्ति का भी सही उपयोग करना है। मन को यदि प्रशिक्षित कर लें तो यह भी संभव है। मानसिक प्रशिक्षण दो बातों पर निर्भर करता है (1) मानसिक एकाग्रता के उपाय का ज्ञान और (2) उसका निरन्तर अभ्यास।

मानसिक एकाग्रता

प्रश्न है मन को एकाग्र कैसे किया जाये?मन दिखाई नहीं देता है। मन एक बेलगाम घोड़े की तरह भागता रहता है। मन की लगाम कहां है?मन रूपी घोड़े की पूंछ पकड़ने से तो वह लात ही मारेगा। मन को बलात्/हठात् पकड़ने की कोशिश करेंगे तो वह और अधिक उग्र हो जाएगा। अतः मन को कैसे पकड़ें?कैसे नियंत्रित करें ?

अध्यात्म शास्त्र का सिद्धान्त है कि मन का श्वास के साथ सीधा संबंध है। 'मन' चंचल है तो श्वास भी चंचल होगा। इस सिद्धान्त के अनुसार यदि हम श्वास की चंचलता को कम कर लें तो मन की चंचलता कम हो जाएगी। तात्पर्य यह है कि श्वास की गति को कम करना सीख लें तो मन की चंचलता नियन्त्रित हो जाएगी। श्वास की गति को कम कैसे करें ?श्वास की गति का अर्थ है एक मिनट में आने वाले श्वास की संख्या। यह संख्या प्रायः एक मिनट में 15 से 20 श्वास तक होती है। एक मिनट में श्वास की संख्या जो 18 है, उसको 6 पर लेकर आना है। तिगुना कम कर दें। इस संख्या को कम करने से श्वास की गति कम, चंचलता कम होगी। मन की चंचलता भी कम होगी। स्थिरता व एकाग्रता का विकास होगा।

मानसिक एकाग्रता का उपाय : श्वास प्रेक्षा

इसका उपाय है-वैज्ञानिक ढंग से श्वास लेना, पूरा श्वास लेना। श्वास का अनुभव करने से, देखने से श्वास की गति कम होती है। संख्या कम होती है। श्वास प्रेक्षा का प्रयोग वैज्ञानिक ढंग से श्वास लेने का प्रयोग है। यह मन की एकाग्रता को बढ़ाने का सरल एवं सक्षम प्रयोग है। इस प्रयोग में साधक अपने चित्त को, जो क्रिया वर्तमान में चल रही है, उसी के ऊपर एकाग्र (Concentrate) होने का प्रशिक्षण प्रदान करता है। मानसिक एकाग्र का तात्पर्य है वर्तमान में चलने वाली क्रिया पर ध्यान केन्द्रित करना। न अतीत की स्मृति, न भविष्य की कल्पना। जैसे प्रत्येक श्वास केवल वर्तमान की क्रिया है-न अतीत की स्मृति, न भविष्य की कल्पना है। साधक उसी को देखने में तन्मय हो जाता है, वैसे ही व्यावसायिक क्षेत्र में भी दूसरे कार्य को छोड़कर केवल वर्तमान में काम पर पूरा ध्यान देना और वैसा करने की आदत डालना यह मानसिक एकाग्रता का प्रशिक्षण है।

श्वास प्रेक्षा एवं श्वसन तंत्र

श्वास प्रेक्षा को समझने के लिए श्वसन तंत्र एवं उसकी कार्य-प्रणाली को समझना उपयोगी होगा। हम श्वास लेते हैं, वह श्वास नाक से छनकर फेफड़ों में पहुंचता है। फेफड़ों में छोटे-छोटे श्वास प्रकोष्ठ (Alveoli) होते हैं। उनकी संख्या 30 करोड़ से 65 करोड़ तक होती है। प्रत्येक श्वास प्रकोष्ठ के चारों और रक्त नलिकाओं (कोशिकाओं) का जाल होता है। इन कोशिकाओं से कार्बन-डाई-ऑक्साइड नाक के माध्यम से शरीर के बाहर निकाल दी जाती है और ऑक्सीजन पूरे शरीर की ऊत्तक व कोशिकाओं तक पहुंचाया जाता है, उससे शारीरिक ऊर्जा बनती है। हमारी शारीरिक ऊर्जा का एक आधार ऑक्सीजन है। इसका शरीर में अधिकतम उपयोग हमारे स्वास्थ्य की कुंजी हमारे फेफड़ों की फुफ्फुसीय प्राण क्षमता (Lung Vital Capacity) औसतन रूप में लगभग 6 लीटर जितनी है। किन्तु आम तौर पर इस क्षमता का पूरा उपयोग नहीं किया जाता। अधिकांश लोग केवल आधा से एक लीटर वायु का आदान-प्रदान कर पाते हैं। इससे हमारा श्वास छोटा, गति तेज एवं संख्या अधिक होती है। अधिकांश व्यक्ति छोटे-छोटे टुकड़ों में छिछला श्वास लेते हैं। आवेग की स्थिति में यह संख्या और अधिक बढ़ जाती है। उनकी श्वास संख्या लगभग 20, 25, 30, 35 एवं 40 प्रति मिनट हो जाती है। इससे श्वास प्रकोष्ठ में हवा मात्र 1 से 3 सेकेण्ड तक रह पाती है।

वैज्ञानिक दृष्टि से श्वास

वैज्ञानिक दृष्टि से सम्यक् श्वास वह है जिसमें-

(1) फेफड़ों की क्षमता का अधिकतम उपयोग हो।

(2) श्वास प्रकोष्ठ में हवा अधिकतम समय (10 से 12 सेकेण्ड) तक रहे।

कोशिका के सुचारू रूप से संचालन तथा क्षमता वृद्धि के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन मिले। वैज्ञानिकों के अनुसार फेफड़ों में वायु का आदान-प्रदान भली भांति तभी हो सकता है जब हवा श्वास प्रकोष्ठ में 10 से 12 सेकेण्ड तक रहे। इससे ऑक्सीजन और कार्बन-डाई-ऑक्साइड का अधिकतम विनियम होता है। अतः पूर्ण श्वास लेना बहुत जरूरी और महत्वपूर्ण है। फेफड़ों की क्षमता के अधिकतम उपयोग के लिए उसे फैलने का पूरा अवकाश मिलना चाहिए। फेफड़े अपने आप में मांसपेशी रहित है। अतः श्वसन प्रक्रिया में आवश्यक यांत्रिक क्रिया में उनका सीधा योगदान नहीं मिलता अर्थात् वह अपने आप फैल या सिकुड़ नहीं सकते। उसको फैलने के लिए पूरी जगह मिलनी चाहिए। यह जगह अवकाश यांत्रिक बल तीन प्रकार से उपलब्ध हो सकता है (1) तनुपट से ऊपर-नीचे खिसका कर, (2) अन्तर्पर्शुकीय मांसपेशियों के संकुचन-विस्तरण के द्वारा (3) हंसली को ऊपर-नीचे खिसका कर।

श्वास को सही ढंग से लेने की प्रक्रिया यह है कि हम तनुपट, पसली एंव हंसली की मांसपेशियों का पूरा उपयोग करें। यह तब संभव है जब हम श्वास को पूरा खाली करें। कार्बन-डाई-ऑक्साइड को अधिकतम बाहर निकाल दें, फिर धीरे-धीरे श्वास लें। सम्यक् श्वास लेने का नियम यह है कि श्वास लेते समय पेट फूले एवं श्वास छोड़ते समय पेट भीतर जाए। इससे तनुपट को नीचे फैलने के लिए पूरा अवसर मिलेगा, पसली एवं हंसली की मांसपेशियों का भी पूरा उपयोग होगा। श्वास की संख्या कम होगी। मन की चंचलता और विचार भी कम होंगे। मानसिक एकाग्रता का विकास होगा।

एकाग्रता का अभ्यास

औद्योगिक, वाणिज्यिक और व्यापारिक क्षेत्र के बड़े-बड़े संस्थान अपने वरिष्ठ प्रबंधकों की कार्यक्षमता बढ़ाने के लिए उनके प्रशिक्षण में प्रतिवर्ष लाखों रुपये खर्च करते हैं। प्रशिक्षण देने वाले संस्थान बहुधा सेमिनार के रूप में ये कार्यक्रम चलाते हैं। यह कार्य मात्र सैद्धान्तिक ही रह जाता है। वस्तुतः कार्यक्षमता के विकास का मूल मंत्र है मानसिक एकाग्रता का अभ्यास। प्रेक्षा प्रणेता आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने एकाग्रता के विकास के लिए एक सरल तरीका प्रेक्षाध्यान में बताया है। वह है-श्वास प्रेक्षा। बच्चे से बूढ़े तक आसानी से उसका अभ्यास कर सकते हैं। इससे अपनी कार्यक्षमता को बढ़ा सकते हैं। अपने व्यक्तित्व व जीवन को

संतुलित बनाकर सफल व संतुष्ट जीवन की दिशा में प्रस्थान कर सकते हैं।

ज्ञान और अभ्यास

मानसिक प्रशिक्षण के लिए दूसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता है-मानसिक एकाग्रता के उपाय का निरन्तर अभ्यास। हमें यदि अपनी कार्यक्षमता को बढ़ाना है तो मन को इतना शक्तिशाली बना दें कि वह जो भी काम करे उसमें पूर्ण रूपसे लगा रहे। अन्य कोई चिन्तन, स्मृति अथवा कल्पना उसे विचलित न कर सके। जिस कार्य में मन लगा है आवश्यकतानुसार उस समय उसी की स्मृति, उसी का चिन्तन एवं उसी की कल्पना रहे। यह सब सम्भव है। एक ही बात की आवश्यकता है। वह है अभ्यास, अभ्यास और अभ्यास। यदि हम अभ्यास कर लेते हैं तो निश्चित रूप से वह क्षमता प्राप्त कर सकते हैं जिसकी आज हम सबको आवश्यकता है। ऐसा क्यों नहीं कर पा रहे हैं?पहला कारण है कि हमें उसका ज्ञान नहीं है। दूसरा कारण है ज्ञान होने पर भी अभ्यास नहीं कर पा रहे हैं।

अभ्यास से असम्भव भी संभव

अभ्यास में वह शक्ति है कि असंभव दिखने वाले कार्य संभव हो जाते हैं। अभ्यास करते करते व्यक्ति एक साथ 30 किमी दौड़ जाता है। पर यह सब एक दिन में नहीं हो सकता। निरन्तर अभ्यास करने से सम्भव हो जाता है। जैसे दोड़ने के लिए मांसपेशियों को प्रशिक्षित किया जा सकता है वैसे ही मन को भी प्रशिक्षित किया जा सकता है। जिस काम में वह नियोजित है उसी में रहे, इधर-उधर नहीं भटके। प्रश्न केवल अभ्यास करने का है। अभ्यास से प्रत्येक कार्य सम्भव हो जाता है। कोई भी व्यक्ति एक ही बार में साइकल चलाना नहीं सीख सकता है। उसको बार-बार अभ्यास करना पड़ता है। एक व्यक्ति तैरना सीखना चाहता है। वह एक ही दिन में तैरना नहीं सीख सकता। उसको बार-बार अभ्यास करना पड़ेगा। एक ही दिन में अच्छा गायक नहीं बन सकता। अनेक कार्य ऐसे है जो केवल अभ्यास से ही संभव होते हैं। यदि हम मन को सही अभ्यास दे दें तो मन भी एकाग्र रह सकता है। जैसे प्रशिक्षण के द्वारा स्मृति का विकास किया जा सकता है वैसे ही मानसिक एकाग्रता का भी विकास किया जा सकता है।

एक व्यक्ति ने संकल्प किया कि मुझे एक पूर्ण वयस्क सांड (वृषभ) को उठाना है। क्या कोई सांड को उठा सकता है?कितना बड़ा होता है। वजन भी कितना अधिक होता है अनेक बार वह आक्रामक भी हो जाता है। फिर आदमी सांड को कैसे उठा सकता है?लोगों ने उसे बहुत समझाया, बहुत कुछ कहा। फिर भी उसने कहा कि मुझे तो उठाना ही है। वह अपने गुरु के पास गया। और कहा-गुरुदेव! मैं एक चमत्कार करना चाहता हूं। मैं एक वयस्क सांड को उठाना चाहता हूं। क्या कोई उपाय है?गुरु बहुत ज्ञानी और अनुभवी थे। उन्होंने अनेकान्त की भाषा मे कहा कि उपाय बहुत सरल है पर अभ्यास कठिन है। आज ही अपनी गौशाला में बछड़े का जन्म हुआ है, आज से ही उसे उठाने का अभ्यास प्रारम्भ कर दो। तब तक धैर्य से अभ्यास करते रहो जब तक एक बछड़ा वयस्क सांड न बन जाये। शिष्य ने गुरु को प्रणाम किया। धैर्य से निरन्तर अभ्यास में लग गया। एक दिन ऐसा आया कि उसने वयस्क सांड को उठाकर सबको आश्चर्य चकित कर दिया। अभ्यास से असम्भव भी सम्भव बन गया।

अभ्यास और निरन्तरता

निरन्तरता में बहुत बड़ी शक्ति होती है। पानी की एक-एक बूंद गिरती रहे, निरन्तर गिरती रहे तो बड़े से बड़ा घड़ा भी भर जाता है। एक बूंद आज गिरी, एक बूंद कल, एक बूंद परसों गिरी तो सभी बूंदें सूख जायेगी, शेष कुछ भी नहीं रहेगा। अभ्यास यदि निरन्तर चलता रहे तो मन इतना प्रशिक्षित हो जायेगा कि जो भी काम करेंगे, मन उस समय उसी में लगा रहेगा। हम हमारे मन की 80 प्रतिशत क्षमता का उपयोग करने में सक्षम हो जायेंगे।

अभ्यास का संकल्प

कार्यक्षमता के विकास के लिए प्रयोग के अभ्यास की बात समझ में आती है, पर इसमें मूल समस्या क्या है?मूल समस्या मन की ही है। वह आपको अभ्यास करने ही नहीं देगा। अभ्यास के प्रतिरोध में वह आकांक्षाएं, आलस्य और दुश्चिन्ताओं को उत्पन्न कर देगा। वह आपको विचलित करने का प्रयास करेगा। यदि आपका संकल्प बल दृढ़ है तो फिर उसका दबाव भी निष्फल हो जाएगा। अतः आप संकल्प करें कि मैं छः महीने तक प्रतिदिन पांच मिनट लयबद्ध श्वास का अभ्यास करूंगा। यदि आपने छः महीने तक पांच मिनट के लिए मन को प्रशिक्षित कर दिया तो इसकी एक अच्छी आदत बन जाएगी। मन को जिस काम में भी लगायेंगे वह उसी कार्य में एकाग्र हो जाएगा। मन शान्त मिलेगा। संकल्प और अभ्यास से हमारा सम्पर्क अवचेतन मन से हो जाता है। विचार और आचार संस्कार का रूप ले लेते हैं। फिर उसको करने के लिए अधिक प्रयत्न की आवश्यकता नहीं होती। वह कार्य स्वतः और सहज हो जाता है।

प्रयोग-प्रविधि

दीर्घ श्वास प्रेक्षा

इसको हम एक मिनट तक की श्वास की गणना करके समझ सकते हैं। (1) सर्वप्रथम एक मिनट के लिए सामान्य श्वास की गणना करें। (लेने और छोड़ने को एक मानें) (2) इसके पश्चात् धीरे-धीरे श्वास छोड़ें एवं धीरे-धीरे श्वास लें। इससे आपकी श्वास की संख्या आधे से कम हो जाएगी। मानसिक एकाग्रता की अनुभूति होगी। (3) तीसरी बार ध्यान नाभि पर रखें। धीरे-धीरे पूरा पेट भीतर ले जाएं, धीरे-धीरे श्वास निकालें। धीरे-धीरे पूरा पेट फुलाएं। धीरे-धीरे श्वास भरें। एक मिनट तक प्रयोग करें। इस प्रयोग में श्वास की संख्या पहले से कम होगी। मानसिक एकाग्रता बढ़ेगी।

धीरे-धीरे श्वास छोड़ना एवं धीरे-धीरे लेना-यही दीर्घ-श्वास है। श्वास को लगातार देखने से, अनुभव करने से श्वास की गति और अधिक मन्द हो जाती है। मानसिक एकाग्रता में अभूतपूर्व वृद्धि होती है। यह श्वास को लेने की वैज्ञानिक प्रक्रिया है। मानसिक एकाग्रता का महत्त्वपूर्ण प्रयोग है।

लयबद्ध श्वास प्रेक्षा

कार्यक्षमता को बढ़ाने के लिए एकाग्रता की भी आदत बनानी होगी। इसको बनाने के लिए एक मिनट में छः श्वास छोड़ने एवं लेने का अभ्यास करना होगा। घड़ी देखकर पांच सैकण्ड में श्वास छोड़ना एवं श्वास लेने का अभ्यास करें। एकाग्रता को परखने के लिए उसी दौरान यह भी देखें कि अन्य विचार कितने आये?उनकी गिनती भी रखें। इस प्रकार पांच मिनट तक अभ्यास करें। यह अभ्यास दिन में तीन बार करें। तीन बार न हो सके तो कम-से-कम दो बार अवश्य करें। अभ्यास क्रम निरन्तर छः महीने तक चले।

इस अभ्यासक्रम से लयबद्ध दीर्घश्वास की आदत बन जाएगी। मस्तिष्क में श्वसन-केन्द्र के द्वारा श्वास की गति का नियमन होता है। वहां पर एकाग्रता के लिए छः श्वास की प्रोग्रामिंग रिकार्ड हो जाएगी। इसका परिणाम यह होगा कि जब भी एकाग्रता की जरूरत होगी, श्वास की संख्या छः श्वास प्रति मिनट हो जाएगी। इससे मन एकाग्र हो जाएगा। एकाग्रता से पुनः श्वास की संख्या छः पर बनी रह सकेगी। यह एक एकाग्रता का चक्र बन जाएगा। छः श्वास प्रति मिनट से एकाग्रता की पुष्टि और एकाग्रता से पुनः छः श्वास की पुष्टि। छः श्वास रूपी दीर्घश्वास के अभ्यास से हमारे मस्तिष्क व स्नायुओं को अधिक ऑक्सीजन पहुंचती है इससे वे लम्बे समय तक बिना थके अपने कार्य में नियोजित रहते हैं। अपनी क्षमता में अभूतपूर्व वृद्धि करते हैं। ❐

प्रेक्षाध्यान और संस्कार निर्माण

❁ मुनि सुखलाल

बहुत बार स्वभाव और संस्कार को समझने में गलती हो जाती है। बहुत सारे स्वभाव को ही संस्कार मान लेते हैं। पर यह सही नहीं है। स्वभाव वह होता है जो मनुष्य का स्वरूप है। संस्कार स्वरूप नहीं अपितु विभाव है। विभाव से स्वभाव में आना ही साधना है।

मनुष्य संस्कारों का पुतला है। संस्कार न केवल उसका इस जन्म का ही उत्पाद है अपितु जन्म-जन्मांतर से उसमें संक्रांत होते रहते है। आज तो विज्ञान ने जीन के रूप में मनुष्य का बहुत गहरा अध्ययन प्रस्तुत कर दिया है। हर जीन में इतनी कूटलिपि लिखी हुई होती है कि उसकी सामान्य आदमी कल्पना ही नहीं कर सकता। मनुष्य के पास दो तरह के मन होते है। एक चेतन और दूसरा अचेतन। चेतन मन केवल पंचेन्द्रिय जीवों को ही प्राप्त है। अचेतन मन हर प्राणी के पास रहता है। हम उसे अमनस्क भी कह सकते है। पर उसमें भी सोया हुआ मन अर्थात् अध्यवसाय तो रहता ही है। मनुष्य पंचेन्द्रिय प्राणी हैं। उसके पास जो चेतन मन है वह वातावरण, अनुभव और स्मृतियों की देन है। अचेतन मन में पूर्व जन्म के संस्कारों का खजाना भरा रहता है।

संस्कार रागात्मक भी हो सकते हैं तथा द्वेषात्मक भी हो सकते हैं। अध्यात्म की दृष्टि से दोनों ही संस्कार क्षयणीय है। यह बहुत ऊंचे स्तर की बात है। पर द्वेषात्मक संस्कार तो हर दृष्टि से त्याज्य है। वे न केवल भविष्य को ही कुलषित बनाते है, अपितु वर्तमान को भी कुलषित बना सकते है। इस दृष्टि से द्वेषात्मक संस्कारों का विनाश हर स्तर पर काम्य है।

कुछ लोगों का कहना है कि संस्कारों में परिवर्तन नहीं हो सकता। ऐसे लोग नास्तिक होते हैं। आस्तिक का तो अर्थ ही यही है कि वह परिवर्तन में विश्वास करता है। यदि परिवर्तन असंभव हो तो फिर पौरुष का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता। मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जो पौरुष से अपने भाग्य लेख को भी बदल सकता है।

बहुत बार स्वभाव और संस्कार को समझने में गलती हो जाती है। बहुत सारे आदमी स्वभाव को ही संस्कार मान लेते है। पर यह सही नहीं है। स्वभाव वह होता है जो मनुष्य का स्वरूप है। संस्कार स्वरूप नहीं अपितु विभाव है। विभाव से स्वभाव में आना ही साधना है। यदि आदमी संस्कार से मुक्त ही नहीं हो सकता तो साधना का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता। संस्कारों से मुक्त होना ही पौरुष है। जब आदमी का पौरुष जागता है तो वह पुरुषार्थ कर विभाव से मुक्त होकर स्वभाव में अधिष्ठित हो जाता है। इसलिए संस्कारों पर विजय पाना ही मोक्ष है। आदमी यंत्र नहीं है। वह ऐसी चेतना सत्ता है जो यंत्रवत् नहीं चलती। अपने स्वभाव को भूल कर प्राणी संसार चक्र में घूमता रहता है। पर जब ही उसका पुरुषार्थ जाग जाता है तो वह यंत्रवत् नहीं चलकर चेतना के विकास की ओर अग्रसर हो जाता है।

संस्कार के क्रोध, मान, माया, लोभ, भय, रति, अरति, शोक आदि अनेक प्रकार है। अनेक मनुष्यों के संस्कार इतने सघन होते हैं कि वे बदल ही नहीं सकते। प्रेक्षाध्यान एक ऐसी पद्धति है जिससे अभवी को भवी तो नहीं बनाया जा सकता पर भवी के संस्कारों को बदलना तो संभव है। क्योंकि भव्यता और अभव्यता तो स्वभावगत है उसे ही तो नहीं बदला जा सकता, पर भवी के संस्कारों को बदलने की तो संभावना है ही।

प्रेक्षाध्यान के अन्तर्गत सबसे पहले कायोत्सर्ग का प्रयोग किया जाता है। जब व्यक्ति गहरे कायोत्सर्ग में चला जाता है तो धीरे-धीरे उसका अचेतन मन भी जाग जाता है। अवचेतन मन को जो सूचनाएं दी जाती है उनसे क्रोध आदि संस्कारों का विनाश हो सकता है। जैन धर्म में अनन्तानुबंधी, अप्रत्याख्यानी, प्रत्याखानी तथा संज्वलन-चेतना के ये चार स्तर बताए गए हैं। इन चारों को बहुत सुगमता से समझने के लिए पत्थर की लकीर, मिट्टी की लकीर बालू की लकीर तथा पानी की लकीर को उदाहरण रूप में बताया गया है। अभवी प्राणी के संस्कार पत्थर की लकीर की तरह के होते हैं। वे कभी नहीं बदल सकते पर अप्रत्याखानी, प्रत्याखानी तथा संज्वलन कषाय को बदलना तो संभव है ही। संज्वलन कषाय को बदलना काफी सहज है। अवचेतन मन को जब शुभ भावनाओं से भावित किया जाता है तो इस जन्म के संस्कारों को तो बदला ही जा सकता है, पर पूर्व जन्म के संस्कारों को भी बदला जा सकता है।

प्रेक्षाध्यान शिविरों में ऐसे अनेक लोग आते हैं जिनके क्रोध, लोभ, भय आदि के संस्कार बहुत गहरे होते हैं। कुछ संस्कार तो कायोत्सर्ग सध जाने से ही विनष्ट हो जाते है। उसके बाद श्वास-प्रेक्षा, चैतन्य केन्द्र प्रेक्षा, लेश्या ध्यान तथा अनुप्रेक्षा के प्रयोगों से सघन रूप से जमे हुए संस्कारों को भी बदला जा सकता है। इन सबकी अपनी एक विशेष विधि है। वह विधि अत्यन्त मनोवैज्ञानिक है जैसे मनोवैज्ञानिक अपनी चिकित्सा विधि से विविध मानसिक रोगों का इलाज करते है उसी प्रकार प्रेक्षाध्यान से भी अनेक लोगों को उनके संस्कारों से मुक्ति मिल जाती है। अवचेतन मन को निरन्तर सुझाव देकर सुसंस्कारों का निर्माण भी संभव है। अवचेतन मन को जब बार-बार सुझाव दिया जाता है तो अच्छे संस्कारों का निर्माण सहज ही संभव हो जाता है।

❐

श्रद्धा का मतलब यही नहीं है कि तुम गलत बात को पकड़ने के बाद उसे छोड़ों ही नहीं।
श्रद्धा यह रख लो कि मैं गलत लगने वाली बात को छोड़ भी सकता हूं।
- आचार्यश्री महाश्रमण

श्रद्धावनत
अमरचंद धरमचंद लुंकड़
राणावास, चेन्नई

विज्ञान अध्यात्म की ओर

❀ प्रो. मुसाफिर सिंह

उन्नीसवीं शताब्दी तक विज्ञान यह मानता था कि विश्व एक मशीन है, मनुष्य भी एक मशीन है तथा चेतना, जीवन और प्राण आदि परिदृश्यों को भी पदार्थ के आधार पर व्याख्यायित किया जा सकता है। विश्व-व्यवस्था का मूल-भूत तत्त्व पदार्थ या जड़ माना जाता रहा है। जैसे वैज्ञानिकों की उद्घोषणा थी कि मुझे कोई Atom की सही स्थिति बता दे तो मैं भविष्य में होने वाली घटनाओं की भविष्यवाणी कर सकता हूं। इसे विज्ञान का Mechano-morphic-phose कहा जा सकता है। इस के बाद शक्ति का सिद्धान्त सामने आया।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार प्रकृति का सारा कार्य चार शक्तियों द्वारा संचालित होता है। गुरुत्वाकर्षण शक्ति, विद्युत-चुम्बकीय शक्ति, Strong Force एवं weak force निरन्तर शोध के बाद वैज्ञानिकों ने सिद्ध कर दिया है कि ये चारों शक्तियां पृथक नहीं है वरन् एक ही शक्ति के भिन्न रूप हैं। इस शोध का unified theory को GUT कहा गया। विज्ञान जिस विविधता से एकता को प्रतिपादित कर रहा है, अध्यात्म उस तथ्य को सदियों पूर्व उजागर कर चुका है।

अध्यात्मक पूरे विश्व के साथ प्रत्येक इकाई के तादात्मय संबंध को मानता है तभी भगवान महावीर ने विश्व मैत्री की बात पर बल दिया। आचार्य महाप्रज्ञ ने लिखा है-मैत्री होगी तो प्राणी मात्र के प्रति होगी, एक-दो व्यक्तियों में मैत्री को बांटा नहीं जा सकता। जैसे कैवल्य की अवस्था में व्यक्ति विश्व में एकता का दर्शन करता है वैसे ही आधुनिक विज्ञान भी विश्व में एकता को देखने लगा है।

पर्यावरण विज्ञान के अनुसार सभी वस्तुयें सम्बद्ध है इसलिए किसी तत्व में होने वाला परिवर्तन पूरे विश्व को प्रभावित करता है। जैन वांगमय में एक चर्चा है:यदि कोई साधु कपड़ा फाड़ता है तो उसके प्रकम्पन पूरे लोग में व्याप्त होते हैं। Butter fly Effect सिद्धान्त भी इसी तथ्य की संपुष्टि करता है। इस सिद्धान्त के अनुसार यदि बीजिंग में एक तितली पंख फड़फड़ाती है तो उससे अमेरिका में कभी तूफान पैदा हो सकता है।

जेम्स लवलाक ने Gaia सिद्धान्त को प्रस्तुत किया है जिसके अनुसार पृथ्वी/प्रकृति एक जीवन्त व्यवस्था है। आज के विज्ञान के अनुसार विश्व का हर कण स्पन्दित हो रहा है और उसके स्पन्दन को विश्व का हर कण प्रभावित कर रहा है। ऐसा लगता है जैसे सारा विश्व एक प्राणमय योजना हो।

आधुनिक विज्ञान पारम्परिक विज्ञान के इस कथन का खण्डन करता है कि पदार्थ से विश्व के सभी परिद्रव्यों की व्याख्या की जा सकती है। प्रो. वे इस बात को नहीं मानते कि जीवन/चेतना पदार्थ की देन है।

शोध प्रक्रिया में इस बिन्दु पर पहुंच गया है जहां आधुनिक विज्ञान के अनुसार प्रयोगशाला सत्य का स्वरूप नहीं समझा जा सकता। सत्य को समझने के लिए उसे अन्तर्मुख होना पड़ेगा। अर्थात् शोध की विधि पर ध्यान होगा। समाधि में ही अन्तिम सत्य की और एकाग्रता की प्राप्ति होती है। सत्य के दर्शन किए जा सकते हैं।

प्रेक्षाध्यान के प्रणेता आचार्य महाप्रज्ञ ने कहा-'सत्य की प्राप्ति इन्द्रियमनोजनित ज्ञान से परे निर्विचार अचिन्तन, निर्विकल्प अवस्था में ही हो सकती है उसकी साधना है गहरी एकाग्रता और ध्यान की स्थिति का निर्माण करना।'

अध्यात्म और विज्ञान दोनों सत्य की खोज के लिए समर्पित है। पूर्ण सत्य को कैवल्य से पहले नहीं जाना जा सकता। सत्य अपने को विविध रूपों में प्रदर्शित करता है। प्रकाश कभी तरंग की तरह दीखता है तो कभी कण की तरह।

अध्यात्म और विज्ञान दोनों सत्य की खोज में किसी भी पूर्वाग्रह को नहीं मानते। सत्य की खोज में जाति, लिंग, वर्ण, सम्प्रदाय, देश व काल जैसे प्रत्ययों की भूमिका नहीं होती। जैन आगम में कहा गया है कि किसी भी देश, जाति, परिवेश में व्यक्ति सिद्धि को प्राप्त कर सकता है अर्थात् पूर्ण सत्य का दर्शन कर सकता है। सत्य प्राप्ति में जिस प्रकार अध्यात्म कषाय चतुष्क को बाधक मानता है वैसे ही विज्ञान भी रागद्वेष युक्त पूर्ण धारणा को गलत मानता है। अब यह निश्चित है कि विज्ञान ज्यों-ज्यों सूक्ष्म के अध्ययन की ओर अग्रसित होगा वह अध्यात्म के क्षेत्र में प्रवेश कर जायेगा और दोनों के बीच विभाजन रेखा लुप्त हो जाएगी। ❐

अनित्यता की अनुप्रेक्षा

आदमी पदार्थों की अनित्यता की अनुप्रेक्षा करे। इस दुनिया में जो कुछ भी है, एक दिन नष्ट हो जाएगा, मिट जाएगा, अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। दुनिया में पदार्थ नित्य और अनित्य दोनों है। जितना पदार्थ अनंतकाल पहले इस पृथ्वी पर था उतना आज भी और उतना ही आगे भी रहेगा। उसी प्रकार जो आत्मा अनंतकाल पहले थी, वह आज भी है और आगे भी रहेगी। पदार्थ की उत्पाद होता है तो उनका व्यय भी अवश्य होता है। व्यय के बाद पदार्थ नष्ट भी हो जाते हैं। उदाहरण के तौर पर आदमी शरीर को ही देख ले तो पहले बचपन की शरीर, फिर युवावस्था की शरीर और फिर बुढ़ापे की शरीर और एक दिन अवसान को प्राप्त हो जाता है। आदमी अनित्य अनुप्रेक्षा में यह ध्यान दे कि दुनिया में सब कुछ अनित्य है, आज शरीर सक्षम है, कल अक्षम हो सकती है, जो कार्य क्षमता आज है, वह आगे नहीं रह सकती। अनित्य की अनुप्रेक्षा से ही आदमी मोह-मूर्छा को त्याग सकता है।

-आचार्य महाश्रमण

अपनी योग्यता को विकसित करो
तुम आजीवन उपयोगी रह सकोगे।
- आचार्यश्री महाश्रमण

श्रद्धावनत

दौलत कैलाश डागा

गैलेक्सी इम्पेक्स, जयपुर

Happiness And Fearlessness

Acharya Mahapragya

Happiness is the greatest achievement of joy and sorrow. Each man passes through joy and sorrow. Joy is no great thing because, behind every joy, there lurks some sorrow. Sorrow, likewise, is not completely bad because it is invariable followed by joy.

Happiness lies beyond joy and sorrow. It virtually signifies purity of the mind. A mind that is pure is not ruffled by joy or sorrow. Happiness is like the pure sky, where there are no clouds, no rain, no hurricane-there is absolutely nothing. The sky is perfectly clear. Happiness is the condition of an unsullied mind. There are, however, many hurdles and dangers to be crossed before one can achieve such happiness. But even a major accomplishment, if attained without effort, loses something of its status and is consequently ranked as minor. How many valleys have been crossed? How many ups and downs have been scaled? These are the questions posed while assessing a great achievement. The destination arrived at when the feet, tired of walking, come to the breaking point, becomes more significant and memorable.

Happiness is a tremendous achievement. Happieness and complete absence of fear go together. They are inseparable linked to each other. Where there is a total absence of fear, happiness is bound to be, and where there is happiness, fearlessness is its inevitable accompaniment. As soon as fear appears, happiness dissovles.

Man's life is tied to the wheel of circumstances. It is an interminable series without any break. There are seven circumstances which destroy happiness and create fear. It is essential to know them :

- Fear of this world
- Fear of the other world
- Fear of likes and dislikes
- Sudden fear
- Fear of suffering
- Fear of death
- Fear of disgrace

The Contenance of Fear

Thanking born out of fear is nagative and destructive. A fearful man is incapable of thinking right; fear dulls his mind and heart; his thinking becomes blunt. It is futile to expect a fear-ridden brain to function normally. Such a brain cannot think constructively. The first condition for sane thinking is total freedom from fear. The mind, the brain and indeed, the whole environment, should be free from fear. Only in the right atmosphere will sane thinking become possible.

Why are we afraid? Why is man ridden by fear? Fear is the outcome of wrong thinking. A man's individuality is determined by his thoughts. He has accepted certain ideas and beliefs, and his aura is vitiated by fear. A man who has understood even a little bit of spirituality, whose dry and anguished existence has been ever so lightly tounched by the greace of religion, cannot but be fearless. He who is not fearless cannot be spiritual or religious, he cannot be sane. Fear is the root of all diseases, of all conflicits and of all non-spirituality. Can a fearful man experience truth? People talk endlessly of the soul and of God, but they live in delusion. How can a man, ridden by fear, know anything of highly subtle and supra-sensual elements? The mind is never free from fear-fear of health, fear of old age, fear of death and separation, fear of loss of people and things. The mind is ever dominated by fear, the power of consciousness is quite overthrown thereby, and one talks of the soul and of God. Will the soul manifest itself in a state of fear? Never. Fear can only give birth to a goblin; it cannot lead us to the soul or to God. Fear is the creator of evil spirits; for many people, it takes the form of a ghost or a demon. It is a kind of mental projection: in the very moment of fear, a ghost begins to take shape before our eyes; it is the projection, the idol, the reactionof a fear-afflicted mind. Is such a mind capable of any subtle penetration?

Fear is inevitably linked with the body-perception, which has two aspects-perception of the body and perception of something that is beyond the physical organism. He who perceives only the body creates more fear; the mere perception of the body is the root of all fear. The man whose vision does not go beyond the body will never know true fearlessness.

All unconsciousness proceeds from the body, and the unawareness of this fact is the root cause of fear. Fear can only exist in a state of unawareness. In a state of full consciousness, fear cannot exist.

Its Origin and The Physical Effects

From the psychological point of view, emotional conduct and behaviour rise from the hypothalamus-that part of the brain which makes up the floor and part of the lateral walls of the third ventricle. There are such centres in our body where different kinds of inclination flow. Passions flow from the body. All emotions have their origin in the hypothalamus, which is the centre of fear.

The doctrine of karma postulates unconsciousness as the stimulator of fear. It is ignorance which gives rise to fear. Among the various states of unconsciousness, one is fear. It is because of fear that man cannot perceive reality.

There are different gestures for every feeling, every sentiment.Thought, feeling and gesture are linked to one another. Our facial gestures are determined by inner feelings. Fear expresses itself in a way peculiar to itself. The face of a man in the grip of fear shrinks. Likewise, the body. Both the body and the face shrink and expand. Fear contracts while joy expands. Irradiated by joy, the face opens up like a flower. On the other hand, the face of a frightened person shrinks. It appears quite emaciated. Changes wrought by fear in the outerappearance are quite apparent. However, the inner parts of the body also manifest these changes. The heart beats faster, the blood pressure goes high, the throat dries up, the glands secreting saliva are deactivated, the face becomes lean, the stomach and the intestines contract and there is a loss of appetite. A man who lives constantly in a state of fear has little appetite. The conductivity of the skin stands

altered; it grows hypersensitive.

A man commits a crime. When presented before the judge, the man, afraid of getting exposed, lies and claims that he is innocent. But how is the judge to establish that the man is a liar? That he is a criminal? Of late, certain devices, like the galvanometer, have been created.The machine is switched on and the man is made to stand before it. The man is afraid of getting caught. This fear gives rise to excitement. His inner being gets disturbed. The moving hand of the galvanometer indicates the disturbance, and conclusively establishes that the man is not at ease, and that is because he has lied. A device like the galvanometer thus establishes the truth. All this happens through the conductivity of the skin which is measured by the galvanometer and which gives us the truth. In a fit of rage or fear or any other strong emotions, both the outward appearance and the inward state undergo a change and this change reveals the truth. A man assumes a thousand poses during the course of a single day.With the help of a sensitive, high-frequency camera, these varying positions can be photographed and the difference between one pose and another can be established clearly. The pose of five minutes ago is completely different from the pose five minutes later. As the inner feelings change, there is a corresponding change in a man's countenance. Even the science of face-reading is based upon that. On the basis of the shape and structure of the face, a man's proclivities, and even his future, can be foretold.

Fear is a strong emotion. A man's countenance in a state for fear shows distress and is strangely disturbing. Whosoever comes in contact with a fear-oppressed man soon imbibes his restlessness. How does it pass on? the visitor would not know why, but he would be disquieted.

When the feeling of fearlessness is awakened in a person, it shows itself in his features. The outward proof of the absence of fear is gaiety; the face blossoms. There is deep tranquillity from within. There is perfect joy. When the current of fearlessness flows, the sympathetic nervous system becomes active. There is no turbulence anywhere. One experiences profound peace and joy. It feels good to be alive.

The Highway To Fearlessness

The question arises: How can we live largely in a state of fearlessness? How can we ensure a ceaseless current of fearlessness? How do we experience a state of fearlessness? Any kind of fear is harmful; while fearlessness is beneficial. We must abandon the stream of fear and enter the stream of fearlessness. For this the right techniques and the right meanse are necessary.

Character and Conduct

There is a path leading to fearlessness. This relates to our character and conduct. Fear springs from violence, untruth, and total acquisitiveness. These are the three great causes intimately connected with our character. Every man knows what creates acquisitiveness-fear. A man leaves his house but, mid-way, he remembers that he has forgotten to lock it. He returns immediately, fearful lest some thief get in. Why this fear? It is because he is so attached to the things which he has accumulated that he cannot look with equanimity upon the prospect of being deprived of them. There are many people who do not even make use of their accumulations. At the time of making yearly accounts on the occasion of Diwali or Ramnavmi, they calculate what profits they have made, their wealth and how much their wealth has increased and the very thought of it gives them deep satisfaction as nothing else in the world can. The mere realization that 'I have so much!' is highly gratifying. Apart from the vast accumulation made, their wealth has no meaning and no utility; it is never consumed. But the very fact of possession make them so happy that it becomes their summum bonum in life. And yet, this realization creates such fear that they know no rest all day and night. They are afraid of being cheated and are tormented by fear. They find a great psychological satisfaction in possession, but this is forever accompanied by the fear that, one day, they may be cheated of their possession. Gratification is momentary but the fear is constant. Accumulation leads to the greatest fear.

Untruth is also a great cause of fear. A man may thoughtlessly tell a lie but is constantly possessed by the fear of getting exposed.

Violence, too, is born of fear. As long a man is possessed by violence, untruth and acquisitiveness, fearlessness cannot be an intrinsic quiality of his character.

What really works is the strength of one's character. When a man's character develops the state of fearlessness, total freedom from fear gradually comes into being. The state inherent in fearlessness does wonders. Whatever a man does then is right. The greatest obstacles that a man faces in the fulfilment of his tasks are fear, mistrust and suspicion. When a man embarks upon a new venture, he is immediately assailed by doubts. 'Will I succeed or not?' he asks himself. 'If I fail, what will people say?' How can a man afflicted with such fear and mistrust really succeed?

The great secret of success is the development of character. The three great pillars of character development

With Best Compliments from

दूसरों को उपदेश देने से पूर्व जरा यह भी आत्मालोचन करें कि उपदेश का कितना अंश तुम्हारे जीवन में है ?

-आचार्य महाश्रमण

श्रद्धावनत

पूज्य पिताजी स्व. रणजीतसिंह जी बैद की पुण्य स्मृति में

प्रकाश प्रमोद बैद

लाडनूं-कोलकाता

are non-violence, truth and non-acquisitiveness.

If we want to enter the state of fearlessness, we must develop in ourselves the spirit of non-violence, for it is one aspect of fearlessness. We must also pursue truth, for truth is another aspect of fearlessness and, with it, we must also cultivate non-acquisitiveness, the third aspect of fearlessness. A man in whose heart these feelings dwell is bound to enter the state of fearlessness.

We are surprised when told that Lord Mahavira was bitten by a ferocious snake named Chandkaushik and yet he remained unmoved. there is, however, nothing unusual inthe occurrence. If the snake had bitten any Tom, Dick or Harry and if the man had stayed unperturbed, it certainly would have been surprising. But for a man like Mahavira, who was constantly and fully aware of himself the poison of a snake, or of a scorpion, was quite immaterial. A man who has reached the highest ground of spirituality is not disturbed by a snake or its poison, and the poison, however dangerous, wouldn't have any adverse effect on him.

The experience of complete consciousness is the experience of the state of fearlessness. Likwise the experience of bliss. We are not talking of pleasure or joy, but of real happiness. Fear is always inherent in pleasure. Joy and sorrow are linked together. Every joy is followed by sorrow, is followed by joy; they make an inseparable pair.

Fearlessness Through Anupreksha

One of the techniques for developing fearlessness is anupreksha (contemplation). Through it, it is possible to develop the flow of fearlessness. Within our body there lie many systems of vibrations. The paths, the tracks and the highways are all there, by means of which sound vibrations pervade the entire organism, and influence our conduct. The ancient doctrine of vibrations is very com prehensive. This doctrine was well established about three thousand years ago, long before the development of the quantun theory. According to it, the world is nothing but a series of vibrations, wave after wave of sensation. A wave of fear arises and immediately, vibrations of fear overwhelm the earth and the sky. If, at that very point in time, we could somehow start a wave of fearlessness, if we could produce vibrations of fearlessness the wave of fear would be dissolved. The doctrine of anupreksha is a contralateral doctrine which lays down that one wave can transcend another, that if a good wave can be started, the bad one would be rendered ineffective. Similarly, a bad wave, if stronger than the good one, would destroy it. Our valour, intelligence and vision determine what we will do at a particular time, and what kind of effort we will put in. A man who has practised preksha meditation one who has perceived the truth that an evil wave can be countermanded by a good one, that a negative wave can be supplanted by a positive one, becomes alert, so that as soon as an evil thought arises in his mind, he sets about releasing a counter wave of goodness that would repel the former.

Fearlessness Through Preksha Dhyana

Another means of attaining the state of fearlessness is preksha. With the gradual development of the power of seeing, our perception becomes truth-oriented. Whatever fear there is, it is because of untruth. False belief, false doctrine, false conception, and false determination-whatever the aspect of untruth, it only creates fear. As our vision develops, we perceive the truth more clearly.We bid goodbye to fiction. We grow stronger, and fear decereases. There is no fear in facing a fact, but fear is inherent in illusion, in the state of unconsciousness, and in untruth. Preksha becomes the means of breaking the cycle of ignorance, and when this cycle breaks, fear is dissolved.

Preksha, anupreksha, and the repetition of mantra-these techniques were developed primarily for the evolution of fearlessness.

Fearlessness Through Mantras

In every tradition-Jain, Buddhist or Vedic-there exist mantras for the prevention of fear. Some people get frightened in their sleep; they have terrifying dreams at night. Others get frightened for on cause. In order to avoid such predicaments, hundreds of mantras have been evolved and they have been used to good effect. They help divert attention from fear. The very condition of the mind gets altered. Also, a great many remidies have been evolved. There are many medicines, roots and herbs which, if placed beside the pillow, stop fear altogether. All dreams cease. The roots and herbs and the mantras have been usefel, and reserach in this direction has yielded good results.

There may be a brief interval between joy and sorrow but, sooner or later, one is bound to be followed by the orther. But bliss is beyond pleaseure and pain, beyond joy and sorrow. Preksha gives rise to waves of bliss-that bliss which is allied with equanimity. In equanimity, there is bliss. In that state, there is total freedom from fear.

❐

जब तक अज्ञानता की अनुभूति नहीं होगी,
तब तक व्यक्ति ज्ञान को प्राप्त नहीं कर सकता।।
- आचार्यश्री महाश्रमण

श्रद्धावनत

हनुमानमल सुराणा
राजगढ़ (कोलकाता)

Pranayam

❁ Mukhya Niyojika Sadhvi Vishrut Vibha

The technique related to breathing pattern in which balanced regular, and rhythmic inhalation and exaltation in specific method is performed is known as pranayam. It comprises four stages :

1. Purak (inhalation)
2. Rechak (exhalation)
3. Antrika kumbhak (holding the breath inside after inhalation)
4. Bahya kumbhak (holding the breath outside after exhalation)

The concept of prana can be illustrated through an example. Electricity flows through a wire to a bulb. The presence of electricity can only be felt when the bulb lights up. Similarly, prana is the vital energy that like electricity flows through the human body and gets manifested through our actions. Pranayam is the technique to master over this prana.

Types

There are several types of pranayam, which mainly differ in the way exhalation and inhalations are performed. A comprehensive list of some of the most important types of pranayam is given below. A detailed description of various type of pranayam can be found in Preksha Meditation : Yogasana and Pranayam.

- Surya-bhedi pranayam
- Chandra-bhedi pranayam
- Anuloma-viloma pranayam
- Bhastrika pranayam
- Kappalbhati pranayam
- Sheetali pranayam
- Ujjai pranayam

Objective

Pranayam serves the following objectives :

- Development, expansion, and control of vital energy.
- Regulation of the flow of vital energy throughout the body.
- Creation of a link between the physical body and the soul.
- Healing of physical and mental disorders.
- Harmony between the sympathetic and parasympathetic neverous systems.

Benefits

The various stages of a well-performed pranayam provides the following benefits :

- In general, pranayam promotes uninterrupted flow of the vital energy through nerves.
- Inhalation gives energy to the body.
- Exhalation cures the abdominal ailments.
- Holding the breath awakens the inherent potentials.
- Some pranayam such as chandra-bhedi cools the body, purifies the blood and reenergizes the body. Similarly, sheetali pranayam quenches the thirst, regulates the blood pressure and enhances the glow of the face. It also reflects the coolness and tranquility of mind.
- Pranayam controls the breath rate and help to improve mental concentration.
- Pranayam helps in realization of divine and intuitive powers.

Specific recommendations

It is essential to learn the conrrect technique of pranayam before we practice it. An ill-performed pranayam may affect the health adversely. Following are some of the precautions that must be considered in order for pranayam to be effective.

- Select a neat, clean, and noise-free location.
- Always perform pranayam with empty-stomach.
- Keep the neck and the spine erect and straight.
- Keep the body relaxed.
- Never perform pranayam if intoxicated.

Conclusion

Pranayam is a scientific technique of correct breathing process. Well-performed pranayam not only assist in sustaining good physical health but also heal diseases that are otherwise difficult to tackle.

❐

संचालित प्रेक्षावाहिनियों के संवाहकों की सूची

क्रम सं.	नाम / स्थान	सम्पर्क सूत्र	क्रम सं.	नाम / स्थान	सम्पर्क सूत्र
01	राज गुनेचा, दिल्ली (कृष्णानगर)	09268729037	43	अशोक जैन, सवाईमाधोपुर	09413380835
02	कविता सुराणा, दिल्ली (शाहदरा)	09818939020	44	सज्जनराज बांठिया, पाली	09414121314
03	सरिता चोपड़ा, दिल्ली (शालीमार बाग)	09868716701	45	निवेदिता नोलखा, टालीगंज	09836371000
04	हनुमान बरड़िया, दिल्ली (लक्ष्मीनगर)	09310147197	46	पुष्पा बैद, बेहाना	09831366760
05	मनीषा जैन, दिल्ली (उत्तम नगर)	09899592787	47	मंजू सिपानी, भवानीपुर	09804334560
06	श्वेता सेठिया, दिल्ली (लाजपतनगर)	09711970124	48	सुधा जैन लेक टाउन	09830216254
07	रेणु बोथरा, दिल्ली (शास्त्रीनगर)	09968075932	49	मंजू सिपानी, अलीपुर	09804334560
08	अमराव दूगड़, दिल्ली (कृष्णानगर)	09310003313	50	बबिता तातेड़, काकुरगाछी	09831740337
09	मंजू बैद, दिल्ली (मॉडल टाऊन)	09680013936	51	प्रेम धारेवा, विशाखापट्टनम	09866102694
10	विमला दूगड़, कांदीवली, मुम्बई	09004937723	52	गौतमचंद सालेचा, जसोल (पे बाकी)	09414108229
11	सूरज धोका, चेन्नई (साउकारपेट)	09381001574	53	डा. विजयश्री शर्मा, लाडनूं	08233344482
12	ललित दुगड़, सूरत	09327386335	54	नरेन्द्र दुगड़, अमरायवाड़ी ओढव	07922893069
13	प्रवीण पुगलिया, कटक	09861366553	55	रायचंद लूणिया, कांकरिया	09327004278
14	सुरेन्द्र ओसवाल, रायपुर	09425285121	56	कमल भंसाली, खुश्कीबाग	09431230892
15	रीना सेठी, जयपुर	09785026111	57	जंवरीलाल सालेचा, बालोतरा	09414106209
16	सरिता कांकरिया, जोधपुर	09829024782	58	राजकुमारी बरड़िया, कोलकाता	09038005252
17	सुरेश जैन, टिटिलागढ़	09437036494	59	अंकिता नन्दकिशोर जैन, केसिंगा	09938820528
18	विकास सुराणा, इचलकरंजी	09326021312	60	चंदा बोरड़, हैदराबाद	09849807591
19	पुष्पा गन्ना, बैंगलोर	09686366250	61	सोनूकुमार जैन, सिन्धकेला	09776582348
20	सुनील छाजेड़, नागपुर	09881556411	62	अनिल बैंगाणी, बरपेटा रोड़, असम	09435124834
21	निशा कुण्डलिया, विशाखापटनम्	09491765646	63	सरिता जैन, तुसरा	09438449559
22	सुरेन्द्र / भारती, नोएड़ा	09899942507	64	बिमल कुमार जैन, उत्केला	09937074670
23	अनुराग बैद, नोखा	09414417112	65	ममता जैन, कांटाभजी	09439870908
24	महेन्द्र मेहता, जोधपुर भाहर	09413058604	66	चंदन जैन, भवानीपटना	09937692805
25	धरमचंद बाफना अलीपुरद्वार	09434184608	67	नीलम बोथरा, फारबिसगंज	09471955551
26	जितेन्द्र पुगलिया, कोयम्बटूर	09843015393	68	राकश सिंघी, बैलूर	09830031321
27	शशि गांधी, न्यू अलीपुर	09830433456	69	मनोज जैन, बोलांगीर	09437037788
28	मनोज संकलेचा, पुणे	09822274374	70	प्रवीण बैद, बंगाईगांव	09435021191
29	देवीलाल कोठारी, केलवा	09413058604	71	सुमितकुमार जैन, बेंगामुंडा	09658961337
30	सुबोध दूगड, उदयपुर	09414263586	72	डा. माया शाह संग्रामपुरा, सूरत	09374533287
31	नौरतन पारख, सिलीगुड़ी	09233423523	73	आंनद सेठिया, नागपुर	09373471831
32	प्रवीण मेड़तवाल, उधना	09428398210	74	श्रीमती अंजू जैन, हावड़ा, कोलकाता	09681230341
33	जेठमल चौधरी, भीलवाड़ा	09214966459	75	कन्हैयालाल बोथरा, गंगाशहर	09414142617
34	जयचंद दूगड़, कूचबिहार	08670272834	76	उषा धाड़ेवा, बांगुर	09433092831
35	टीकमचंद बैद, दीनहट्टा	09547344571	77	मंजू सिपानी, बालीगंज	09804334560
36	धर्मचंद बोथरा इरोड	09362258194	78	मंजू सिपानी, शिवतल्ला	09804334560
37	संदीप मादरेचा, डोमबिवली	09820368498	79	राजेश बैद, न्यूसीजी रोड, अहमदाबाद	09016721435
38	भारती डांगड़ा, कुर्ला	09869514103	80	विमला दूगड़, कांदीवली, मुम्बई	09004937723
39	सुनीता कोठारी, रतलाम	08989465876	81	श्रीमती सुमन चोपड़ा, लूणकरनसर	09413400818
40	ममता बांठिया, सूर्यनगर, दिल्ली	08010081967	82	यशपाल गुप्ता, भोरपुर, पंजाब	09780728910
41	भरत कुमार जैन, भीम	09414786474	83	सुश्री प्रज्ञा जैन, नीमच	09425187845
42	अनंत कुमार जैन, गांधीधाम	09426217140	84	श्रीमती सविता रुणवाल, कोल्हापुर	09850222241

संचालित प्रेक्षावाहिनियों के संवाहकों की सूची

क्रम सं.	नाम / स्थान	सम्पर्क सूत्र	क्रम सं.	नाम / स्थान	सम्पर्क सूत्र
85	विद्याधर बोरड़, हनुमानगढ़	9982858336	103	रमेश नौलखा, काठमांडू, नेपाल	0977981023674
86	वंदना नाहर, चन्दनवन, बैंगलोर	07406150330	104	सीमा कावड़िया, राजसमंद	9413664780
87	सीमा गिड़िया, उत्तरपाड़ा, कोलकाता	9433955595	105	चन्द्रप्रकाश पोरवाल, तुलसी निकेतन, उदयपुर	09414737357
88	रवि छाजेड़, नार्थ हावड़ा, कोलकाता	9433022720	106	संगीता पोरवाल, महाप्रज्ञ विहार, उदयपुर	09468578797
89	मोहनलाल बोथरा, बालीगंज	9331019457	107	संगीता पोरवाल, आनंदनगर, उदयपुर	09468578797
90	बंसत मालू, बोदकदेव, अहमदाबाद	9327002736	108	संगीता पोरवाल, सुराणा सदन उदयपुर	09468578797
91	मदन कोठारी, पर्वत पाटिया, सूरत	9374532225	109	चन्द्रप्रकाश पोरवाल, बिजौलिया हाउस, उदयपुर	09414737357
92	मुन्नी देवी डागा, चूरू	09413879404	110	उषा धारेवा, साल्ट लेक, कोलकाता	09433092831
93	ओमप्रकाश जैन, पीलीबंगा	9460646804	111	राजेन्द्र बरड़िया, अढाजन, सूरत	09227920166
94	सीमा जैन, जगराओ, पंजाब	09988943738	112	विजेता रायसोनी, गांधीनगर, बैंगलोर	09844569101
95	सुशीला पुगलिया, सरदारशहर	9982116227	113	आनंद लूणिया, लिलुआ, कोलकाता	9330997778
96	दीपिका बोथरा, बीकानेर	9351321988	114	प्रेमलता चौरड़िया, हिन्दमोटर, कोलकाता	9433061999
97	गौतम गादिया, सूरत (सिटीलाइट)	9377555545	115	श्रीमती बेताला, छोटी खाटू	0823334482
98	राजेश डागा, पाल रोड़, जोधपुर	9413371045	116	मीना डी.समर, उधना, सूरत	9726564530
99	महावीर संचेती, उधना 2, सूरत	9825788460	117	सुशमा हीरावत, रामेश्वरम, सूरत	8141040749
100	वंदना नाहर, हनुवंतनगर, बैंगलोर	7406150330	118	तारा खटेड़/कुसुम गुलगुलिया, सूरत	9377469990
101	महावीर संचेती, सचिन, सूरत	9825788460	119	सरला गुजराणी, नौगांव	9707027711
102	महावीर संचेती, पंडेसरा, सूरत	9825788460	120	श्रीमती उषा, अहमदाबाद	9914500378

संभावित प्रेक्षावाहिनी संवाहकों की सूची

क्रम सं.	नाम / स्थान	सम्पर्क सूत्र	क्रम सं.	नाम / स्थान	सम्पर्क सूत्र
1.	राजेश बैंगवानी, अररिया कोर्ट	9431259851	20.	विकास जैन, घाटकोपर, मुम्बई	9819760767
2.	वीरेन्द्र संचेती, कटिहार	9431260358	21.	उगमराज बैद, तेजपुर	9435081434
3.	कमलेश धाकड़, नाथद्वारा	9461805833	22.	अभयराज बैंगानी, बीदासर	9954213279
4.	राकेश संचेती, मोमासर	9694588430	23.	दीपक टांटिया, इगमोर, चेन्नई	09176374822
5.	दिलीप दूगड़, गौहाटी	9435404819	24.	संगीता नाहटा, सूरत (वीआईपी)	9376630760
6.	दीपशिखा बैद, हाजरा, कोलकाता	09007974585	25.	अनिल रांका, सूरतगढ	9414092230
7.	सुशील बोरड़, विजयनगरम	09440985577	26.	वंदना नाहर, बासवनगुड़ी, बैंगलोर	07406150330
8.	महेश मेहता, कच्छ	09879360855	27.	पूनम गादिया, चिकमंगलूर	09481156545
9.	दिनेश नौलखा, मरोल, मुम्बई	09892765261	28.	प्रकाश सुराणा, सैंथिया	09007222404
10.	मंजू लूणिया, विजयनगर, बैंगलूर	9343411603	29.	बंशीलाल बोथरा, वीरगंज	977.9855022040
11.	सरला बरड़िया, मोलाली, कोलकाता	9830842120	30.	दीपक चांवरिया, बीकानेर शहर	9829033247
12.	अनिल सांखला, जलगांव	9422566311	31.	पूजा दुगड़, न्यूअलीपुर एक्सोटिका	9007718595
13.	अभिषेक बोथरा, फालाकाटा	9434137753	32.	सरला गुजरानी, नौगांव	9707027711
14.	नंदकुमार जैन, हिसार	9416471943	प्रभारी प्रेक्षा वाहिनियां		
15.	सुमन नाहटा, गरिया हाट, कोलकाता	9007078440	01	अलका सांखला, सूरत	09427491613
16.	प्रियदर्शिनी जैन, हिमायतनगर, हैदराबाद	8374704700	02	डॉ. धारिणी जैन, ओडिशा प्रांत	09916317230
17.	प्रियदर्शिनी जैन, बाउनपल्ली, हैदराबाद	8374704700	03	बिमल गुनेचा, दिल्ली	97164799904
18.	राजेश भादानी, श्री डूंगरगढ	9887701998	04.	आनंद सेठिया, असम	9373471831
19.	विनोद राठौड़, उल्हासनगर, मुम्बई	9923767437	05	उषा धाड़ेवा, पश्चिम बंगाल	09433092831
			06.	मंजू सिपानी, पश्चिम बंगाल	09804334560

भावना, क्रिया और परिणाम की एक शृंखला है। कार्य का परिणाम प्रायः भावना पर आधारित होता है। शुद्ध भावना से की गई क्रिया शुभ परिणाम लाती है। – आचार्य महाश्रमण

हार्दिक शुभकामनाओं सहित

सरला देवी – महेन्द्र कुमार जैन

महनसर (राजस्थान) - किशनगंज (बिहार)

बैंगलोर (कर्नाटक)

पर्यावरण प्रदूषण की समस्या और जैन दर्शन-1

❁ डॉ. समणी हिमप्रज्ञा

सृष्टि का जीवन सापेक्ष है। इसमें जड़ और चेतन जितने पदार्थ हैं, वे एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। सृष्टि के किसी कोने में कुछ भी घटित होता है, उसका प्रभाव सब पर होता है। इकोलोजी का भी यही सिद्धान्त है कि संसार के सब पदार्थ एक दूसरे पर आश्रित है। एक का परिवर्तन दूसरे में भी परिवर्तन लाता है।

धरती, हवा, पानी और वनस्पति सृष्टि संतुलन के आधारभूत तत्त्व है। ये जैसे हैं, वैसे ही बने रहे तो सृष्टि का संतुलन बना रहता है। इनका अनावश्यक दोहन करने से सृष्टि का संतुलन बिगड़ता है। दुनिया में अपना एक निश्चित संतुलन है। सारी प्रकृति तालबद्ध तरीके से चल रही है। कुछ लोग मानते हैं कि इस गतिमयता के पीछे ईश्वर का हाथ है। पर जैन दर्शन ऐसी किसी ईश्वर शक्ति में विश्वास नहीं करता। उसके अनुसार तो सब प्राकृतिक नियमों के अनुसार ही होता है। मनुष्य प्राकृतिक व्यवस्था का उल्लंघन कर वैज्ञानिक प्रगति के नाम पर कुछ ऐसा प्रयत्न कर रहा है जिससे सहज संतुलन के बिगड़ने का खतरा पैदा हो रहा है।

पर्यावरण प्रदूषण का प्रमुख कारण मिथ्या दृष्टिकोण

कुछ लोगों की मान्यता है कि सब पदार्थ मनुष्य के उपभोग के लिए बने हैं। इस मिथ्यादृष्टिकोण से पर्यावरण का प्रदूषण हो रहा है। अनेक वैज्ञानिक, सामाजिक कार्यकर्ता आदि का कथन है कि पर्यावरण प्रदूषण का यही क्रम रहा तो धरती रहने लायक नहीं रहेगी। पर्यावरण आज का सबसे अधिक ज्वलन्त मुद्दा है, क्योंकि इसके भयंकर प्रदूषण ने न केवल किसी एक देश विशेष को हानि पहुंचाई है, अपितु समस्त जीव जातियां इस भयंकर खतरे की चपेट में हैं। एक जीव विज्ञानी ने अपने वक्तव्य में कहा-आज का मनुष्य हजारों-लाखों पशु-पक्षियों को नष्ट कर रहा है। ''काफी अनुसंधान के बाद उसने यह निष्कर्ष निकाला'' एक हजार प्रजातियां नष्ट हो गई हैं और अनेक प्रजातियां लुप्त होने के कगार पर हैं।

पर्यावरण प्रदूषण के कारण आज प्रकृति का सारा ही संतुलन गड़बड़ा गया है।

पर्यावरण प्रदूषण के विविध रूप

पर्यावरण विज्ञान का एक पहलू है-पर्यावरण का संतुलन। उसका दूसरा पहलू है-पर्यावरण का प्रदूषण। पर्यावरण प्रदूषण का एक कारण है प्लास्टिक प्रदूषण। भारत में भी विश्व के अन्य देशों की भांति प्लास्टिक से होने वाले प्रदूषण की मात्रा प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। छोटे से छोटे खाद्य पदार्थ हो या पान मसाले के गुटके हो सभी वस्तुएं प्लास्टिक में पैकिंग होती है। पॉलीथिन और प्लास्टिक गांव से लेकर शहर तक सबकी सेहत बिगाड़ रहे हैं। प्लास्टिक के गिलासों में चाय या फिर गर्मदूध का सेवन करने से उसका केमिकल लोगों के पेट में जाता है। इससे डायरिया के साथ अन्य गंभीर बीमारियां होती है। प्लास्टिक और पॉलीथिन का प्रयोग पर्यावरण और मानव सेहत दोनों के लिए खतरनाक है।

प्लास्टिक कचरा वैश्विक स्तर पर पर्यावरण को नुकसान पहुंचा रहा है। कुछ महीनों पहले कुछ आंकडे आए जिसमें स्पष्ट किया गया कि हर साल पूरी दुनिया में उत्पादित होने वाली लगभग तीस करोड़ टन प्लास्टिक दोबारा उपयोग में नहीं लाया जाता है जिसका दीर्घकालिक प्रभाव कहीं न कहीं पृथ्वी के चारों महासागरों पर पड़ रहा है। एक अन्य शोध निष्कर्ष से पता चला है कि समुद्री मछलियों के पेट में बड़ी मात्रा में प्लास्टिक मिलने लगा है। इस तरह मछलियों में प्लास्टिक का मिलना न केवल मत्सय प्रजातियों के लिए घातक है, बल्कि समुद्री खाद्य पर निर्भर मनुष्यों व अन्य जीवों का जीवन खतरे में पड़ सकता है।

इलेक्ट्रोनिक प्रदूषण

वर्तमान समय में मोबाइल, कम्प्यूटर, लैपटोप, टैबलेट आदि हमारे जीवन का अभिन्न हिस्सा बन गए हैं, नित नई तकनीक के साथ अपने आपको जोड़े रखने के जुनून में हम भूल जाते हैं कि पुराने कम्प्यूटर का क्या होगा, पुरानी सीडी एवं दूसरे ई-वेस्ट को कूड़ेदान में डालते वक्त कभी ध्यान ही नहीं देते कि यह कबाड़ हमारे लिए कितना खतरनाक हो सकता है। बढ़ते शहरीकरण के कारण इलेक्ट्रोनिक उपकरणों का ज्यादा प्रयोग होने लगा है, मगर इससे पैदा होने वाले ई-कचरे के दुष्परिणाम से लोग अनजान है। ई-कचरे के अन्तर्गत सभी इलेक्ट्रोनिक उपकरण आते हैं। पिछले साल दुनिया में सबसे ज्यादा 1.6 करोड़ टन ई-कचरा एशिया में पैदा हुआ, इनमें चीन में 60 लाख टन, जापान में 22 लाख टन और भारत में 17 लाख टन इ-कचरा पैदा हुआ। पिछले साल पैदा हुए ई-कचरे में सात फीसद मोबाइल फोन, प्रिंटर, केलकुलेटर और छोटी आईटी उपकरण रहे, भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक द्वारा दिए गए आंकड़ों के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष लगभग 4 लाख टन ई-कचरा पैदा होता है। घरेलू ई-कचरे जैसे- अनुपयोगी टी.वी. और रेफ्रिजरेटर आदि उनमें लगभग एक हजार विषैले पदार्थ होते हैं जो मिट्टी एवं भू-जल को प्रदूषित करते हैं। इन पदार्थों के संपर्क में आने पर सरदर्द, उल्टी, आंखों में दर्द जैसी समस्याएं हो सकती है।

इसके अतिरिक्त पर्यावरण प्रदूषण के निम्नांकित कारण इस प्रकार हैं-

- प्राकृतिक संसाधनों का अनावश्यक दोहन।
- सुविधावादी जीवनशैली और बढ़ता हुआ असंयम।

- पृथ्वी का अधिक मात्रा में उत्खनन।
- पानी का अनाप-सनाप अपव्यय, कीट नाशक दवाएं।
- धूम्रपान।
- खेतों में रासायनिक खाद का असंतुलित उपयोग।
- वनों की अंधाधुंध कटाई।
- ध्वनि प्रदूषण।
- निरंतर बढ़ती आबादी।
- औद्योगीकरण।
- वाहनों द्वारा छोड़ा जाने वाला धुंआ।
- नदियों, तालाबों में डाला जाने वाला कूड़ा कचरा।

भूमि प्रदूषण

पत्थर के कोयले आदि के लिए पृथ्वी का दोहन अत्यधिक किया जा रहा है। भूवैज्ञानिकों की आशंका है कि यदि खनिज पदार्थों का उपयोग इसी प्रकार होता रहेगा तो कुछ ही वर्षों में भंडार खाली हो सकते हैं। कुछ स्थानों पर पहाड़ों के उत्खनन से पानी का प्रवाह विपर्यस्त हो जाता है जिससे बहुत सारी कीमती जमीन को नदियां लील जाती हैं। उससे जो प्राकृतिक विनाश होता है उसका अंकन करना कठिन है। पत्थर के कोयलों के जलने से भी प्रदूषण बढ़ता है। एक व्यक्ति एक वर्ष में जितना ऑक्सीजन का उपयोग करता है उतना ऑक्सीजन एक टन कोयले के जलने से खत्म होता है। औद्योगिक इकाइयों में कोयले का जलाया जाना चलता रहा तो कुछ वर्षों बाद तेजाबी बारिश हो सकती है ऐसी संभावना की जा रही है। पृथ्वी के अत्यधिक उत्खनन की समस्याएं स्पष्ट हैं। पर्यावरण की दृष्टि से पृथ्वी के ऊपर की मिट्टी की परत बहुत मूल्यवान है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि- एक सेन्टीमीटर मोटी परत के बनने में लगभग 300 से 1000 वर्ष तक का समय लग जाता है। एक-एक कण के जमने से इस परत का निर्माण होता है। मनुष्य के एक ही झटके से यह परत इतनी क्षतिग्रस्त हो जाती है जिसकी पूर्ति लाखों वर्षों बाद ही संभव हो सकती है।

भगवान् महावीर ने कहा-मेधावी पुरुष हिंसा के परिणाम को जानकर पृथ्वी शस्त्र का समारंभ न करें, दूसरों से उसका समारंभ न करवाये, उसका समारंभ करने वालों का अनुमोदन न करें। नाना प्रकार के शस्त्रों से पृथ्वी संबंधी क्रिया में व्याप्त होकर पृथ्वीकायिक जीवों की हिंसा करने वाला व्यक्ति अनेक प्रकार के अन्य जीवों की हिंसा करता है। इससे सिद्ध होता है कि महावीर ने पृथ्वीकाय की हिंसा का निषेध किया है। जैन विज्ञान के अनुसार पृथ्वी में रहने वाले कीटाणु पृथ्वीकाय नहीं हैं। पृथ्वीकाय स्वयं जीवाणुओं का पिंड है। विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि एक ढेले में कई लाख दर्जन अति सूक्ष्म जीवाणु हैं, जो लाखों वर्ष से धरती को उपजाऊ बनाए हुए हैं।

भूमि की उर्वरता बढ़ाने हेतु रासायनिक खाद का तथा फसल को कीड़ों और रोगों से बचाने के लिए कीटनाशक दवाओं का उपयोग किया जाता है जो भूमि को प्रदूषित कर देते हैं। इनके कारण भूमि को लाभ पहुंचाने वाले मेंढक एवं केंचुआ जैसे जीव नष्ट हो जाते हैं।

जल प्रदूषण

पृथ्वी का तीन चौथाई हिस्सा जल मग्न है। फिर भी करीब 0.3 फीसदी जल पीने योग्य है। विभिन्न उद्योगों और मानव बस्तियों के कचरे ने जल को इतना प्रदूषित कर दिया है कि पीने के करीब 0.3 फीसदी जल में से मात्र करीब 30 फीसदी जल ही वास्तव में पीने के लायक रह गया है।

आजादी के बाद तीव्र औद्योगीकरण तथा गहन कृषि के परिणामस्वरूप जल प्रदूषण की समस्या वृहद् स्तर के रूप में सामने आई है। भारत की हुगली नदी संसार की सबसे प्रदूषित जल स्रोतों में से एक मानी जाती हैं। गंगा नदी जिसे हिन्दुओं की पतित पावनी कहा जाता है अत्यधिक प्रदूषित हो चुकी है। यमुना, गोमती, चम्बल तथा झेलम नदी भी प्रदूषित हो चुकी है। प्रदूषित जल का सेवन करने से निम्नलिखित रोग पैदा होते हैं जैसे त्वचा रोग, पीलिया, टायफाइड, बुखार, कैंसर, जोड़ों के दर्द, गुर्दा तथा हृदय रोग आदि।

जल के बिना जीवन संभव नहीं है। जल जीवन के लिए आवश्यक है। जल पोषक तत्त्व होने के साथ -साथ शरीर के अन्य पोषक तत्त्वों के वहन का कार्य भी सम्पादित करता है। शुद्ध जल शरीर के लिए अत्यंत जरूरी है। शुद्ध जल के अभाव में अनेक बीमारियां पनपने की संभावना रहती है। वर्तमान समय में पीने के लिए शुद्ध जल भी दुर्लभ है क्योंकि चारों ओर प्रदूषण के कारण वातावरण विषाक्त होता जा रहा है। जल का संबंध अन्य क्रियाओं से भी जुड़ा है। भोजन पकाने में, सफाई करने में, विभिन्न उद्योग-धन्धों में, सिंचाई में, वाष्प से चलित ईंजन में, बिजली पैदा करने के लिए विद्युत यंत्रों आदि में जल की अपेक्षा रहती है। इससे स्पष्ट है कि जल जीवन की आधारभूत आवश्यकता है।

आज से 40—50 वर्ष पहले मनुष्य जल का दुरुपयोग नहीं करता था। उसकी आवश्यकताएं भी सीमित थी। उसकी प्रत्येक क्रिया में संयम था। वर्तमान समय में मनुष्य संयम की बात भूल गया है इसीलिए स्नान करने में कपड़े धोने में, घर की सफाई करने में अनाप-सनाप पानी का अपव्यय करता है। परिणामस्वरूप अनेक व्यक्तियों को पीने के लिए पानी नहीं मिल रहा है। जैन दर्शन के अनुसार पानी की एक बूंद में असंख्य जीव होते हैं। प्रसिद्ध वैज्ञानिक कैप्टिन स्कबेसिवी ने यन्त्र के द्वारा एक लघुजलकण में 36450 जीव गिनाये हैं।

जल प्रदूषण से अपकाय की हिंसा तो होती ही है पर वनस्पति, द्वीन्द्रिय प्राणी, मछलियों, यहां तक कि उसका प्रदूषण मनुष्य को भी प्रभावित करता है। पानी में मनुष्य का मल फेंकने से भी उसमें भयंकर प्रदूषण पैदा होता है। 'सेन्ट्रल बोर्ड फॉर प्रिवेंशन एण्ड कंट्रोल ऑफ वाटर सोल्युशन' के अध्यक्ष का मन्तव्य है कि प्रतिदिन दिल्ली में यमुना में दस करोड़ लीटर मल निर्यात होता है, जबकि उसमें दो करोड़ लीटर कचरा भी उद्योगों द्वारा छोड़ा जाता है। सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि प्रतिवर्ष जल प्रदूषणों से लगभग दो लाख व्यक्ति मर रहे हैं। इंग्लेण्ड में प्रतिदिन एक हजार मिलियन लीटर कचरा टेम्स नदी में फेंका जाता है। जर्मनी की राईन नदी में करोड़ों मछलियां प्रदूषित कचरे के कारण मर गई। आयरलेण्ड के समुद्र में हजारों समुद्रपक्षी कीटनाशक पदार्थों के कारण मर गये थे। इसलिए भगवान् महावीर ने कहा है-तं से अहियाए तं से अबोहीये,-जल की यह हिंसा मनुष्य के अहित तथा अबोधि का कारण है। जल प्रदूषण से पौधों व जन्तुओं की मृत्यु हो जाती है। खनिज तेल के रिसाव से जलीय जीवों को बड़ी संख्या में हानि होती है। ऐसे जल से सिंचाई करने पर फसलें नष्ट हो जाती है। रसायनों के कारण भूमि की उत्पादकता में कमी आती है। आचारांग निर्युक्ति में जलकायिक जीवों के सात प्रकार के शस्त्रघात बतलाये गये हैं-

1. उत्सेचन-अर्थात् कुएं आदि जलाशयों से जल निकालना और मूल स्रोत से उसे पृथक् करना।

2. गालन-मोटे कपड़े से जल छानना।

3. धावन-वस्त्र, पात्र आदि धोना और उसके मूल-स्वरूप को खराब कर इधर-उधर फेंकना।

4. परकायशस्त्र-तेल, मिट्टी, क्षार आदि का जल से मिश्रण कर उसके मूल स्वरूप को विकृत करना।

5. स्वकायशस्त्र-नदी का पानी तालाब के पानी का शस्त्र।

6. तदुभयशस्त्र-जल मिश्रित मिट्टी जल का शस्त्र।

7. भावशस्त्र-असंयम द्वारा जल का दुरुपयोग करना।

❐

कैसे करें जीवन का संचालन ?

❁ समणी विपुलप्रज्ञा

जिंदगी का सफर अच्छी तरह करना हो तो सर्वप्रथम लक्ष्य बनायें, जिंदगी के कुछ मापदण्ड निर्धारित करें और स्वयं चिन्तन करें कि हम 'कैसे करें जिंदगी का संचालन?' फिर मानव निश्चित अपनी मंजिल को प्राप्त कर पायेगा।

जीवन में अनुकूल और प्रतिकूल दोनों स्थितियां आती है। मानव के समक्ष जब प्रतिकूल स्थिति आती हैं तब वह दुःखी पीड़ित निराश व हताश बन जाता है और कभी-कभी अपनी जिंदगी से हारकर जीवन को समाप्त करने की सोच लेता है। दूसरी तरफ मानव के जीवन में अनुकूल घटनाएं घटती है तब वह अहंकार और यशलिप्सा के रोग से ग्रसित हो जाता है। लगता है मानव की यह सहज चाह रहती है कि अनुकूल घटनाएं उसके जीवन में घटित होती रहे। उदाहरण के तौर पर किसी 'ए' व्यक्ति ने सभा में वक्तव्य या गीत गाया, सुनकर के लोग प्रसन्नता के साथ झूम उठे, तालियों की गड़गड़ाहट से पूरा माहौल गूंजायमान हो गया। 'ए' नामक व्यक्ति को भी अपनी प्रशंसा सुनकर बहुत खुशी हुई। बस वहां पूर्ण-विराम कर देना चाहिए था परन्तु नहीं वह वहां अल्पविराम लगाता है। वह सोचता है कि पूरे देश व विश्व में मेरे नाम का झण्डा फहराए। एक नया कीर्तिमान स्थापित करूं। वह लोगो की निगाहों के केन्द्रस्थान में रहना पसंद करता है। मानो वही उसके जीवन की अन्तिम सफलता है, शेष सब व्यर्थ व निरर्थक है।

भगवान महावीर ने उत्तराध्ययन सूत्र में कहा-

अच्चणं रयणं चेव, वंदणं पूयणं तहा।
इड्ढीसक्कार सम्माणं, मणसा बिन पत्थए।।

अर्थात् साधक अर्चना, वंदना, पूजा, ऋद्धि, सत्कार-सम्मान पाने की कभी मन से भी इच्छा न करें। महान वैज्ञानिक न्यूटन के शब्दों में-प्रसिद्धि और यश महारोग है। यह एक ऐसा छूत का रोग है जिसके लग जाने पर जीवन सदा के लिए अस्वस्थ बन जाता है। यश, कीर्ति की भूख व प्यास अनंत है। इस दुनिया में लोग अपने स्वार्थ-वश एक दूसरे की खुशामद करते हैं। परन्तु समय व परिस्थिति के बदलने पर यदि प्रतिकूल स्थिति आई तो वह मन में कटुता व द्वेष की भावना पैदा करती है। प्रत्येक परिस्थिति में प्रत्येक इन्सान का अपना एक संदर्भ होता है। समय व स्थिति बदलने पर संदर्भ भी बदल जाता है। जैसे समय बहता है, बदलता है वैसे परिस्थिति भी बहती है, बदलती है। कोई भी इंसान समय का मालिक नहीं बन सकता। समय बड़ा बलवान है। समयानुसार मानव गति, प्रगति, अवगति व अधोगति को प्राप्त करता है।

एक समय जीवन में ऐसा भी आता है जब मानव अपने जीवन का संचालन स्वयं करने लगता है। बचपन में बालक के जीवन का संचालन उसके माता-पिता करते हैं। पर आज की इस व्यस्तता भरी जिंदगी में तनाव के बोझ से लदे अभिभावक स्वयं अपने कर्त्तव्य से विमुख होकर अपने संतान की जिंदगी के साथ खिलवाड़ करते हैं। वे ही बालक जब बड़े होते हैं, समझने लगते हैं तब वे अपने मां-बाप से बहुत दूर जाकर स्वयं ही अपनी जिंदगी का संचालक बन जाते हैं। और पीछे से मां-बाप अपने किये कर्म पर पश्चाताप व आंसू बहाते रहते है। इस संदर्भ में घटित घटना है-

शंकर भाई अपने व्यापार में अतिव्यस्त रहते थे। पत्नी के लिये भी थोड़ा समय नहीं निकाल पाते थे, क्योंकि सारा समय अपनी यश-प्रशंसा सुनने में ही निकल जाया करता था, इसलिए दोनों के बीच दूरी बढ़ने लगी और प्रतिदिन किसी न किसी बात को लेकर विवाद या लड़ाई हो जाया करती थी। पुत्र विजय पर गलत संस्कार का प्रभाव न पड़े यह सोचकर उन्होंने बेटे को निकट शहर के होस्टल में भर्ती करा दिया। अमीर बाप का बेटा था, पैसे की चिन्ता नहीं थी। विजय साल में दो बार घर पर आता, यदाकदा अभिभावक स्वयं भी विजय से मिलने जाया करते थे। इस प्रकार 5 वर्ष की अवधि व्यतीत हो गयी। विजय की समझ बढ़ने लगी। उसने देखा-मम्मी पापा अपनी संतान के प्रति कितने लापरवाह है। दोनों की जिंदगी सिर्फ लड़ाई-झगड़े में ही व्यतीत हो रही है। ऐसी स्थिति में मेरा जीवन सार्थक नहीं बन सकता। यह सोचकर उसने मम्मी-पापा से कह दिया कि अब वह आगे का अध्ययन अमेरिका जाकर करेगा। पापा ने सोचा कि अमेरिका में पढ़कर मेरा मेटा मेधावी बन जाएगा पर मां का दिल रोने लगा, बेटे से बोली-विजय! तुम यहीं पर रहकर ऊंची पढ़ाई करो। मैं तुम्हारे बिना जी नहीं सकती। तब विजय ने स्पष्ट कहा कि अब मैं मेरी जिंदगी का संचालक हूं। मैं स्वयं अपने भाग्य का निर्माण करूंगा। विजय के इस एक वाक्य ने अभिभावक को सोचने के लिए मजबूर कर दिया। दोनों ने महसूस किया कि 5 वर्ष में उन्होंने क्या खोया। उनके देखते-देखते इकलौटा बेटा विजय अमेरिका चला गया। वहां की संस्कृति में रम गया। अमेरिकन लड़की के साथ उसने विवाह भी कर लिया। स्वयं अमेरिकावासी हो गया।

'अब पछतावे क्या होत, जब चिड़िया चुग गई खेत' इधर शंकर भाई पश्चाताप की अग्नि में जल रहे हैं। यह तो एक परिवार से संबंधित घटना है। पर हमारा जीवन अनेक पहलू से जुड़ा हुआ है। डाली से पत्ता तोड़ना आसान है पर पुनः डाली से चिपकाना संभव नहीं है। वैसे ही जीवन को निरर्थक बनाना सरल है पर जिंदगी को सार्थक व सफल बनाना कठिन है। जो मानव जीवन का संचालन करता है, वही जीवन को सरस बना सकता है। इस संसार में चार प्रकार के लोग है, जो अपने जीवन का संचालन करते हैं।

(1) कुछ लोग जीवन का संचालन स्वयं करते हैं।

(2) कुछ लोगों का जीवन गुरु या स्वहितैषी द्वारा संचालित होता है।

(3) कुछ लोग स्वविवेक व गुरु की प्रेरणा, दोनों के माध्यम से जीवन का संचालन करते हैं।

(4) कुछ लोग बिना संचालक के जीवन जीते है।

जो मानव अपने जीवन का संचालन स्वयं करते है उन्हें कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं को आत्मसात करना चाहिए, जैसे-

(1) विवेक चेतना

हर इंसान को अपने जीवन का हिसाब-किताब रखना चाहिए। कितना नुकसान इसका लेखा-जोखा विवेक द्वारा करना चाहिए। जीवन की भी लयबद्धता बनी रहनी चाहिए। हमें अपने विचार, कार्य आदि को दूसरों के भरोसे नहीं छोड़ने चाहिए। अच्छा जीवन बनाने के लिए हम दूसरों की सलाह ले सकते हैं पर उस समय भी अपनी विवेक-चेतना जागृत रहे। क्योंकि विवेक रूपी रिमोट कंट्रोल से हम अपने जीवन का संचालन करने में सफल व समर्थ हो सकते हैं।

(2) आत्मनिर्णय

यह एक ऐसा गुण है जो इन्सान को लोभ में फंसने नहीं देता। लोभी व्यक्ति में आत्मनिर्णय की क्षमता नहीं होती। दुनिया में ऐसे लोग बहुत है जो आत्म-निर्णय के अभाव में अतिलोभ में फंसकर मिलने वाले थोड़े लाभ को भी खो देते है। एक लखपति को करोड़पति बनने की इच्छा थी, उसने शेयर का व्यापार शुरू किया। उसके पास जो शेयर थे उसके भाव एकदम बढ़ गये पर मित्र ने कहा-पागल है तू अभी भाव और बढ़ेंगे अभी तेजी का दौर चल रहा है। मित्र

की बात मान ली, लोभ जगा, अभी शेयर में और तेजी आयेगी इसलिए बाद में बेचूंगा। थोड़ा समय व्यतीत हुआ। अचानक उन्हीं शेयर के भाव ऐसे घट गये कि वह लखपति करोड़पति तो न बन सका पर निर्धन बन गया। आत्मनिर्णय की कमी से उसके जीवन की गाड़ी लड़खड़ाने लगी। अतः 'आत्मनिर्णय' इस गुण को विकसित करना जरूरी है।

(3) विधेयात्मक चिन्तन

विधेयात्मक चिन्तन जीवन-संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब व्यक्ति यह जानता है कि मुझे अपने जीवन का संचालन करना है इसलिए विधेयात्मक विचारों मे ही सोचना है। फिर वह कभी दुःखी या तनावग्रस्त नहीं होता क्योंकि वह दुःख में भी सुख ढूंढ़ लेता है।

(4) धैर्य- सहनशीलता

'उतावलो सो बावलो' 'हड़बड़ी में गड़बड़ी' इत्यादि सुक्तियां जीवन की सच्चाई को प्रगट करते है। टालस्टॉय का कथन है-'धैर्य तब तक रखो जब तक छलनी में पानी न टिक पाये। जो स्वयं जीवन का संचालन करते हैं उन्हें धैर्य व सहनशीलता को अपनाना पड़ेगा। फिर कहीं पूछने की जरूरत नहीं कि जीवन को कैसे संचालित करूं?आचार्य महाप्रज्ञजी ने कहा-'सहन करो, सफल बनो।'

जिन लोगों का जीवन ऐसे सद्गुणों से भरा हुआ है वे अपने जीवन को सदा सुखी बनाने की कोशिश करते है। इसलिए वे छोटे से छोटे सुख व खुशी का भी सदा स्वागत करते है। वह थोड़ी सी खुशी का संचय खारे समुद्र जैसी जिंदगी में पर्याप्त मिठास घोल देती है। जिंदगी को सरलता व सहजता से जीना चाहिए। केवल पैसे से जीवन नहीं जीया जाता, अच्छा जीवन जीने के लिए सद्गुणों रूपी धन की परमावश्यकता है।

संसार में कुछ लोग है जो अपने सम्पूर्ण जीवन की बागड़ोर अपने गुरु के या हितैषी के हाथ में सौंप देते हैं। वे इंसान बहुत सौभाग्यशाली होते हैं जिन्हें सद्गुरु मिल जाते हैं, और उनके निर्देशानुसार अपने जीवन का संचालन करते हैं। जैन धर्म में तेरापंथ धर्मसंघ एक ऐसा संघ हैं जिसमें दीक्षित होने वाले मुमुक्षु के जीवन का संचालन गुरु के द्वारा होता है। गुरु की दृष्टि ही शिष्य की सृष्टि होती है। गुरु की आज्ञा ही मुमुक्षु का जीवन होता है। आचार्य भिक्षु ने तेरापंथ धर्मसंघ का संविधान मर्यादा और अनुशासन के आधार पर बनाया है। तेरापंथ के संविधान में मर्यादा व विधि-विधान के संदर्भ में एक महत्त्वपूर्ण विधान है-'तेरापंथ की क्या पहचान-एक गुरु और एक विधान।' तेरापंथ धर्मसंघ के मुमुक्षु को यह सोचने की जरूरत नहीं कि मुझे अपने जीवन का संचालन कैसे करना है। अगर कोई मुमुक्षु अज्ञानवश या अहंकारवश स्वयं की चिन्ता करता है तो वह अपनी साधना को सफल नहीं बना सकता है।

इस संघ में दीक्षित होने वाले शिष्य से गुरु पूछते है-वत्स! तुम कहां रहोगे?शिष्य गुरुदेव जहां रखेंगे वही रहूंगा।

गुरु-क्या खाओगे?शिष्य-जो आप खिलायेंगे।

गुरु-कहां सोओगे?शिष्य-जहां आप सुलायेंगे।

गुरु- तुम्हारी क्या-क्या इच्छाएं हैं?शिष्य-जो गुरु की इच्छा है वह मेरी इच्छा है। कहने का तात्पर्य है कि शिष्य अपनी सम्पूर्ण इच्छाएं, अपना मन भी गुरुदेव के चरणों में समर्पित कर देता है क्योंकि शिष्य को बहुत श्रद्धा है कि गुरु ही मेरे जीवन को बनाने वाले हैं और भव सागर से पार कराने वाले है। इस प्रकार मुमुक्ष जीवनपर्यन्त सब प्रकार की चिन्ताओं से मुक्त हो जाता है। गुरु की महिमा का गुणगान करते हुए कहा है-

गुरु की महिमा अनंत, अनंत किया उपकार।
लोचन अनंत उघाडिया, अनंत दिखावण हार।।
(कबीर)

तेरापंथ के आचार्य स्वयं ही अपने शिष्यों के आत्म-विकास के लिए अहर्निश जागरूक रहते हैं। विशाल शिष्य समुदाय के सभी शिष्यों के जीवन का भार सक्षम आचार्य ही उठा सकता है। यह तेरापंथ धर्मसंघ का सौभाग्य है कि इसे एक से बढ़कर एक तेजस्वी और ओजस्वी आचार्यों का संरक्षण मिला है।

'सचमुच हम कितने सौभागी सदा त्रिवेणी नहाये।
मानव जीवन, जैनधर्म, भैक्षवगण को पाये।।'

इस जहां में कुछ लोग ऐसा भी सोचते हैं कि जीवन का संचालन स्वयं को ही करना चाहिए और कभी-कभी गुरु या अपने हितैषी की सलाह माननी चाहिए। जीवन कठपुतली नहीं है, इसलिए जिंदगी रूपी खेल की डोरी स्वयं के हाथ में रखें। पर बहुत बार ऐसा भी होता है कि स्वयं जो सोचता है वह नहीं होता, सही करते-करते उल्टा हो जाता है फिर भी उस समय अपने भाग्य को न कोसते हुए दूसरों की सलाह पूर्वक कार्य करने में विवेक रखा जाय तो जीवन को अच्छी तरह संचालित किया जा सकता है।

कुछ लोग ऐसे भी है जिन्हें यह भी पता नहीं कि जीवन को कैसे संचालित किया जाए। बस जिंदगी बिना लक्ष्य के ही चल रही है। युवक ने बुजुर्ग से पूछा-यह सड़क किधर जायेगी?बुजुर्ग ने कहा-तुम कहां जाना चाहते हो?युवक-मुझे पता नहीं कि मैं कहां जा रहा हूं?बुजुर्ग-तब तुम इस चौराहे की किसी भी सड़क से जा सकते हो, कोई भी एक सड़क ले लो-कोई फर्क नहीं पड़ेगा। बिना लक्ष्य का जीवन ठीक वैसा ही है जैसे बिना ब्रेक व लाइट की कार जो कितनी खतरनाक होती है कहने की जरूरत नहीं।

जिंदगी का सफर अच्छी तरह करना हो तो सर्वप्रथम लक्ष्य बनायें, जिंदगी के कुछ मापदण्ड निर्धारित करें और स्वयं चिन्तन करें कि हम 'कैसे करें जिंदगी का संचालन?' फिर मानव निश्चित अपनी मंजिल को प्राप्त कर पाएगा। इससे भी सुगम रास्ता है-प्रेक्षाध्यान की साधना। ❒

अर्हम्

पधारो सा

शान्तिदूत महातपस्वी आचार्य श्री महाश्रमण जी
का सन् 2018 का पावस प्रवास चेन्नै में

संघ संग चलें

तमिलनाडु प्रवेश - 1 जुलाई, 2018 - आरम्बाक्कम
तमिलनाडु प्रवेश समारोह - 5 जुलाई, 2018 - मीन्जूर
चेन्नै प्रवेश - 6 जुलाई, 2018 - मनली

समस्त धर्मानुरागी बंधुओं को भाव भरा
आमंत्रण

नागरिक अभिनन्दन - 8 जुलाई, 2018 - नेहरू स्टेडियम
चातुर्मासिक प्रवेश - 21 जुलाई 2018 - माधावरम

आचार्य श्री महाश्रमण चातुर्मास प्रवास व्यवस्था समिति, चेन्नै

धरमचन्द लुंकड़ (अध्यक्ष) रमेश बोहरा (महामंत्री) ललित दूगड़ (कोषाध्यक्ष)

कुटीर बुकिंग हेतु सम्पर्क करें : पुखराज बड़ोला (9444076737) रमेश खटेड़ (9840085004)

मारक औषधियों के मानसिक दुष्परिणाम

❁ पं. श्री राम शर्मा

प्रत्येक पदार्थ की एक स्वाभाविक प्रकृति भी होती है। प्रयोगों में जहां वह अन्य प्रभावों का प्रदर्शन करता है, वहां उसकी एक विशेषता यह भी होती है कि अपनी सूक्ष्म विशिष्टता का प्रभाव छोड़े बिना भी नहीं रहता।

तुलसी सामान्य तथा शोधक गुण वाली वनस्पति है, किन्तु उसका एक सूक्ष्म प्रभाव ऐसा भी है जिसे आध्यात्मिक समझा जा सकता है। पीपल-आंवला आदि वृक्षों में भी न्यूनाधिक मात्रा में अन्य पेड़ों जैसे ही गुण हैं, किन्तु उनके सूक्ष्म प्रभाव ऐसे भी हैं, जिनके कारण उन्हें देवोपम माना गया है। उनके सान्निध्य से मनुष्यों को भी उन विशिष्टताओं का लाभ मिलता है।

यही तथ्य मारक प्रकृति के पदार्थों के संबंध में भी दृष्टिगोचर होता है। चाकू काटने के काम में आता है। शाक-भाजी से लेकर कागज तक उससे काटे जाते हैं। यह विखंडन की प्रकृति उसके उपयोग करने पर अन्यत्र भी अपना प्रभाव छोड़ती है। चाकू को डरावने या अनिष्ट रोकने जैसे कार्यों में तो प्रयुक्त किया जा सकता है, किन्तु सद्भावना, मैत्री, भक्ति आदि प्रसंगों में उसे माध्यम नहीं बनाया जा सकता है। प्रेमोपहार में पुष्प तो भेंट किए जा सकते हैं, पर छुरी भेंट करना सर्वथा अटपटा लगेगा। यह प्रकृति विपर्यय ही हुआ।

चिकित्सा-प्रयोजनों में काम आने वाले प्रचलित उपचारों पर भी यह वर्गीकरण लागू होता है। कुछ वनस्पतियां, रसायनों सात्विक प्रकृति की है। उनके प्रयोग से जहां रोगों की निवृत्ति होती है, वहां मनुष्य की प्रकृति में सतोगुण और स्वभाव में संयम-सदाचार का अनुपात बढ़ता है। इसके विपरीत कुछ ऐसी भी हैं, जो विषाणुओं के मारने में अपनी घातकता का परिचय तो देती हैं, पर पीछे जो प्रभाव मनः क्षेत्र पर छोड़ती है, उससे सेवनकर्त्ता की प्रवृत्ति पर अनुपयुक्त प्रभाव पड़ता है। शारीरिक रोग में कमी आने पर यदि मानसिक दृष्टि से मनुष्य गिरने-गड़बड़ाने लगे तो समझना चाहिए कि '2 गज जोड़ने और 4 गज तोड़ने' की उक्ति चरितार्थ हो चली।

इन दिनों एंटीबायोटिक्स मारक औषधियों की चिकित्सा क्षेत्र में भरमार है। एलोपैथी में तो इस सन्दर्भ में अतिवाद ही बरता जा रहा है। रोगों के कारण विषाणु हैं और उनसे निपटने के लिए मारक औषधियों का प्रयोग आवश्यक है-इस मान्यता पर इन दिनों उपचार का निर्धारण होता है। फलतः खोज और प्रयास भी यही चलता रहता है कि अधिक मारक औषधि मिले और उसका जल्दी-से-जल्दी चमत्कार दिखाया जाए।

बलवर्द्धक औषधियों के संबंध में भी यह मान्यता पनपी है कि प्राणियों के शरीर निचोड़कर ऐसी वस्तुएं प्राप्त की जाए, तो दुर्बल शरीर में पहुंचकर उस कमी की पूर्ति कर सके। इस उपाय के अवलंबन से कितनी दुर्बलता दूर हुई, यह जानना कठिन है, किन्तु इतना निश्चित है कि प्राणिवध में अपनायी गई, निष्ठुरता रोगी के गुण, कर्म और स्वभाव पर ऐसे प्रभाव छोड़ती है, जो मानवीय गरिमा को गिराने वाली सिद्ध होती है।

अत्युत्साह में अपनायी गई आधुनिक चिकित्सा पद्धति में मारक रसायनों और प्राणिवध के उत्पादकों की भरमार रहती है। इसका दुष्प्रभाव सेवनकर्त्ताओं की प्रकृति में भावनात्मक अवांछनीयता बढ़ाता है और उस कारण व्यक्तित्व का स्तर गिरने पर ऐसा स्वभाव एवं चरित्र बनता है, जो शरीर के निरोग दीखने पर भी मन को रुग्ण स्तर का बनाकर रख दे।

ऐसे उदाहरण आए दिन सामने आते रहे हैं, परन्तु उपेक्षा एवं अनाग्रह से वे दृष्टिगोचर नहीं होते, पर जहां तथ्यान्वेषी अनुसंधान चलते हैं, वहां वास्तविकता उभरकर आगे आ जाती है। अमेरिका जैसे विकसित देशों में यह प्रयत्न भी चला है कि मारक औषधियों के सेवन से मनुष्य पर पड़ने वाले मानसिक प्रभाव का भी पता लगाया जाए। इस संदर्भ में की गई खोज-बीन के चौंकाने वाले परिणाम सामने आए है।

जर्नल ऑफ अमेरिकन फार्मास्युटिकल एसोसिएशन में छपे ब्लॉक एम.एच. तथा 'लेमी पी.पी.' के लिखे लेख में इस संदर्भ के कुछ तथ्यों का उल्लेख है। दवाओं के अत्यधिक सेवन से आत्मघात करने के प्रयास अमेरिका में सबसे अधिक होते होते है। प्रति 10,000 में 1 तथा प्रतिदिन 1,000 आत्मघात विश्व में होते है। इस संख्या का 40 प्रतिशत आत्मघात केवल अमेरिका में दवाओं को अधिक परिणाम में लेने की वजह से होता है। अधिकृत आंकड़ों की अपेक्षा आत्महत्या से मरने वालों की वास्तविक संख्या कहीं अधिक हे। अमेरिका में विभिन्न रोगों से मरने वालों की श्रेणी में आत्महत्या से मरने वालों का नम्बर 11वां है। सन् 1964 ई में दुर्घटना से मरने वालों के तुरन्त बाद आत्महत्या करने में 15 से 34 वर्ष के पुरुषों की भी संख्या थी। पिछले दशक में आत्मघात से मरने वालों की संख्या बढ़कर दुगनी हो गई है।

फेल्योर ऑफ प्रोबेनेसिड टु इनहिबिट दि रेट ऑफ मेटाबोलिज्म ऑफ टाल्ब्युटेमाइड इन मेन 'क्लीनिकल फार्माकोलॉजिकल केरेप्युटिक्स' पत्रिका में प्रकाशित ब्रुक आर. एवं सोलोमन एच.एम. के एक शोधपत्र के अनुसार शारीरिक अथवा मानसिक कष्ट से छुटकारा पाने के लिए ली गई अत्यधिक दवा के कारण स्त्रियों की आत्महत्या की संख्या पुरुषों से बहुत अधिक है। पुरुषों में दवा से आत्महत्या करने की अपेक्षा बंदूक से आत्महत्या करने का प्रचलन अधिक है। वैसे दवा लेकर आत्महत्या करने वालों में सबसे अधिक संख्या डॉक्टरों की पाई गई है।

विधि की विडम्बना है कि नशीली दवा का व्यसन, मानसिक तनाव एवं आत्मघात के शिकार अधिकतर चिकित्सक हुआ करते है। जैसे डेंटिस्ट, फिजीशियन्स और स्वास्थ्य के व्यवसायी कर्मचारीगण। 'यू.ए.स. मेडिकल जर्नल', नवम्बर, 1877 ई. के अनुसार विशेषकर मनोचिकित्सक जिनका प्रमुख कार्य आत्महत्या के प्रयासों के कारणों का पता लगाना होता है, वे आत्महत्या करने में सबसे प्रवीण होते हैं।

एक अध्ययन के अनुसार चिकित्सकों में नशीली दवाओं का व्यसन सामान्य जनता की अपेक्षा दो से लेकर सौ गुना तक अधिक होता है : क्योंकि उनके सामने ही अनेक प्रकार की नशीली दवाएं प्रतिशत में मौजूद होती है और उनके गुण-धर्म से भी वे परिचित होते है।

इंग्लैंड एवं वेल्स के प्राप्त आंकड़ों के अनुसार आत्महत्या करने वाली स्त्रियों में 42 प्रतिशत एवं पुरुषों में 22 प्रतिशत कथित आत्महत्या के लिए दवा का सहारा लेते हैं।

एक अध्ययन के अनुसार साइकोलॉजी कोर्स के अंडर-ग्रेजुएट छात्रों में से 27 प्रतिशत छात्रों ने आत्महत्या का प्रयास किया, जिसमें से एक-तिहाई ने दवाओं के माध्यम से आत्मघात का प्रयास किया।

यह मारक औषधियों की प्रतिक्रिया से उत्पन्न अनेकानेक दुष्परिणामों में से मात्र आत्महत्या संबंधी सर्वेक्षण से उजागर होने वाले तथ्यों का विवरण है। इससे यह नहीं समझा जाना चाहिए कि मात्र यह एक ही हानि होती है। गुण, धर्म और स्वभाव में उत्पन्न वे हानियां असाधारण हैं, जो मनुष्य को चिड़चिड़ा, सनकी, निराश, उद्विग्न, अनुपयुक्त और अनैतिक चिंतन का अभ्यस्त बनाती चली जाती है। इसका प्रतिफल व्यक्तित्व के स्तर में बहुमुखी गिरावट के रूप में जब सामने आता है, तब प्रतीत होता है कि चमत्कारी लाभ की आतुरता में किया गया या कराया गया मारक औषधियों का उपयोग अंततः कितना भारी और महंगा पड़ता है। ❐

प्राणायाम की महत्ता

❀ वैद्य लक्ष्मीकान्त दीक्षित

प्राणायाम की साधना से शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक शक्ति का विकास होता है तथा आत्मसंयम, सत्वबुद्धि, प्रतिभा व आकर्षक व्यक्तित्व की प्राप्ति होती है। रोग व दुर्व्यसनों से मुक्ति प्राप्त होती है। इच्छाशक्ति एवं आत्मबल की वृद्धि होती है। सम्मोहन शक्ति व इन्द्रियों की सहायता बिना मनोभावों का आदान-प्रदान यथा दूरदर्शन, दूरभाष एवं दूर सन्देश सम्प्रेषण की शक्ति प्राप्त होती है।

प्राणायाम आबाल, वृद्ध, युवा नर-नारी सब के लिए परम हितकारी है। अन्य व्यायाम अति दुर्बल, राजयक्ष्मा (T.B.) ग्रस्त, हृदय रोग से पीड़ित, मिर्गी, आन्त्रवृद्धि के रोगियों हेतु वर्जित है। अस्ति भंग, शोथ व पाण्डु रोग से पीड़ित, पक्षाघात लकवा से आक्रान्त व अपंग हेतु भी निषिद्ध है। बारह वर्ष से कम आयु के बालक-बालिकाओं हेतु भी अन्य व्यायाम वर्जित है किन्तु प्राणायाम की साधना समस्त जन कर सकते हैं। इसके अभ्यास से रोग का शमन तथा त्वरित आरोग्य लाभ होता है। दण्ड-बैठक, मुग्दर घुमाना व भारोत्तोलन के समान व्यायाम कष्ट साध्य है, जबकि प्राणायाम सुखसाध्य है। प्रायः योग इतर व्यायाम व्यक्ति की बौद्धिक क्षमता को न्यून करते हैं। पहलवानों में बुद्धिमन्दता विशेष रूप से पायी जाती है किन्तु प्राणायाम मेधाशक्ति का विकास करता है और बुद्धि को प्रखर करता है, साधक की सूक्ष्मग्राहिता विवर्धित करता है और प्रत्युत्पन्न मति को चैतन्य बनाता है। अन्तर्ज्ञान को जाग्रत करता है। प्राणायाम सर्वोपयोगी व्यायाम है। कतिपय विशेष प्राणायाम को छोड़कर जो उच्च श्रेणी के साधक व योगीजनों की विशेष साधना हेतु ही है शेष की साधना सभी कर सकते हैं। ये सहज और सुखदायक है। इनमें समय भी अपेक्षाकृत कम लगता है और लाभ अधिक होता है।

प्राणायाम की साधना से शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक शक्ति का विकास होता है तथा आत्मसंयम, सत्वबुद्धि, प्रतिभा व आकर्षक व्यक्तित्व की प्राप्ति होती है। रोग व दुर्व्यसनों से मुक्ति प्राप्त होती है। इच्छाशक्ति व आत्मबल की वृद्धि होती है। सम्मोहन शक्ति व इन्द्रियों की सहायता बिना मनोभावों का आदान-प्रदान यथा दूरदर्शन, दूरभाष एवं दूर सन्देश सम्प्रेषण की शक्ति प्राप्त होती है। प्राणायाम से बुद्धि प्रखर होती है, जिससे मानसिक श्रम करने वाले व्यक्तियों यथा अध्यापक-प्राध्यापक, अधिवक्ता, कवि, साहित्यकार आदि हेतु हितावह है। समाज सुधारकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, नायक-नायिकाओं एवं गायकों, नेताओं-अभिनेताओं को भी प्राणायाम से विपुल शक्ति प्राप्त होती है। जिससे वे श्रोताओं एवं दर्शकों पर प्रभावी प्रभाव छोड़ने से समर्थ होते हैं।

प्राणायाम की साधना से बड़े-बड़े उद्योगपतियों एवं व्यापारियों की कर्मठता, लगन व तत्परता शक्ति का विकास होता है। ग्राहकों को आकर्षित करने की व्यावहारिक बुद्धि, जो कि व्यवसाय की जान है और जिससे व्यापार दिन-दूनी-रात-चौगुनी उन्नति करता है और उसे भी प्राणायाम की नियमित साधना से साधा जा सकता है।

योगासन एवं प्राणायाम नारी की शारीरिक रचना के लिए भी विशेष अनुकूल है। इससे उसे सुघड़ता, सुन्दरता, सुकोमलता व आरोग्यता की प्राप्ति होती है और उसकी जीवनी शक्ति में भी अद्‌भुत विकास होता है। गर्भवती महिलाओं को तो प्राणायाम से लाभ होता है। जो महिलाएं गर्भधारण के उपरान्त कतिपय विशेष आसन-प्राणायाम का अभ्यास करती हैं उनके गर्भस्थ भ्रूण का सम्यक परिपोषण होता है। गर्भावस्था में होने वाली शारीरिक व मानसिक पीड़ाओं का सरलता से निराकरण होता है। गर्भावस्था में होने वाली शारीरिक व मानसिक पीड़ाओं का सरलता से निराकरण हो जाता है। सगर्भा का स्वास्थ्य अच्छा रहता है। उसके प्रजनन अंग इतने पुष्ट एवं सक्षम होते रहते हैं कि उसे शल्य क्रिया प्रसूति की नौबत नहीं आती, अपितु सहज प्रसूति से ही स्वस्थ सन्तान की प्राप्ति हो जाती है और गर्भस्थ शिशु पर श्रेष्ठ संस्कार पड़ते हैं।

माता-पिता अपनी सन्तान की उद्दण्डता, उच्छृंखलता, अनृत भाषा (झूठ बोलना) चोरी-जारी, जुआ व नशा आदि दुर्व्यसन को प्राणायाम के अभ्यास द्वारा दूर करने में समर्थ होते हैं।

इस प्रकार प्राणायाम आबाल-वृद्ध, नर-नारी, गृहस्थ व सन्यासी हरवर्ग हेतु हितकारी है। आध्यात्मिक साधकों हेतु तो यह अत्यावश्यक है। यह जाति, धर्म या सम्प्रदाय निरपेक्ष है। प्राणायाम के साथ किये जाने वाले भजन, जप, ध्यान, पूजा-अर्चना त्वरित फलदायी होते हैं। प्राणायाम साधक की संकल्प शक्ति को सुदृढ़ता प्रदान करता है जिससे वह लौकिक उलझनों के मध्य भी उत्साह उमंग उल्लास के साथ बिना विघ्न-बाधाओं के अपनी साधना सिद्ध करने में समर्थ होता है। प्राणायाम से आराधना-उपासना भावपूर्ण बनती है। मन का चांचल्य दूर होता है और एकाग्रता सुदृढ़ होती है और जन्म-जन्मान्तर के कुसंस्कार का उन्मूलन होकर अन्तःकरण पवित्र बनता है और सत्संस्कारों का उदय होकर एवं रूचियों का परिमार्जन होकर आत्मविश्वास आत्मबल और आत्म-तेज की वृद्धि होती है। विभिन्न प्रकार की समस्याओं के समाधान की बुद्धि प्राप्त होती है।

हृदय रोग, रक्तचाप, बहुमूत्र एवं मधुमेह आधुनिक जीवनशैली से उत्पन्न दुस्साध्य रोगों से भी प्राणायाम मुक्ति दिलाने में समर्थ हैं।

यही नहीं, प्राणायाम तो परमपिता परमात्मा से साक्षात्कार कराने का भी एक प्रमुख साधन है किन्तु असाध्य नहीं। वास्तव में श्रद्धायुक्त भक्ति, कठोर संयम और जितेन्द्रियता से यह सुसाध्य हो जाता है। पवित्रता एवं सदाचार इसकी पृष्ठभूमि है, जो नियमित अभ्यास के द्वारा साधक को सिद्धि की ओर ले जाती है। प्राणायाम का नियमित साधक उपासना में बैठ कर निरन्तर भगवद् चिन्तन करते हुए प्राणायाम को अपने वश में कर लेता है और कुछ समय की साधना से सुषुम्ना नाड़ी के मार्ग द्वारा श्वास क्रिया (breathing) का अभिसरण (Circulation) करता हुआ मस्तिष्क की प्रत्येक क्रिया पर अपना अधिकार स्थापित कर दिव्य शक्तियों (Divine Powers) का प्रसाद प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है। इस प्रकार प्राणायाम के साधक को अन्तर ज्योति प्रदान कर ईश्वरानुभूति करा कर साधक को जीवनमुक्त करता है। उसका मन मन्दिर नितान्त पवित्र हो जाता है। उसके हृदय में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना हो जाती है। बस! वह तो जीता है इसी सद्‌भावना के साथ-

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वेभद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग् भवेत्।।

सावधानी :

प्राणायाम का अभ्यास क्रमपूर्वक धीरे-धीरे करें। अनावश्यक उतावलापन न करें। इससे लाभ के स्थान पर हानि भी हो सकती हे। अभ्यास नियमित करें, अन्यथा पूरा लाभ न होगा। पतंजलि मुनि का कथन है-

यथा सिंहो गजो व्याघ्रो भवेदवश्यः शनैःशनैः।
तथैवं सेवितो वायुरन्यथा हन्ति साधकम।। (हठयोग प्रदीपिका 2/15)

जैसे शेर, हाथी, बाघ आदि वन्यजीव धीरे-धीरे वश में होते हैं (शीघ्र वश में नहीं होते) उसी भांति धीरे-धीरे अभ्यास करने पर प्राणवायु वश में होता है। शीघ्रता करने से साधक (प्राणायाम अभ्यासी) का नाश होता है। मन्तव्य-प्राणायाम का अभ्यास धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए।

❐

जीवन रक्षक औषधि : लवंग

डॉ. एन.के. द्विवेदी

लवंग के वृक्ष सुन्दर और सुंगधित होते है। भारत में ये वृक्ष दक्षिणी भारत (केरला व तमिलनाडु) व जंनीबार द्वीप समूह में पाए जाते हैं। भारत वर्ष में इसका अधिकांश आयात सिंगापुर से किया जाता है। इसके वृक्ष पर लगभग नौ वर्ष की आयु में फूल लगने शुरू हो जाते हैं। इसकी पुष्प कलिकाओं को ही सुखाकर बाजार में लौंग के नाम से बेचा जाता है।

बाजार में दो प्रकार के लौंग मिलते हैं। काले तीव्र सुगन्ध वाले हैं वे मूल रूप में है। दूसरे भूरे रंग के कुड़कुडड़े आते हैं, वे वाष्पयंत्र द्वारा तेज निकालने के पश्चात् बचे हुए होते हैं। लोंगों में दो प्रकार के तेल पाए जाते हैं। उड़नशील तथा स्थिर। इनमें से स्थिर तेल का आपेक्षित गुरुत्व 1047 से 1060 है। अतः यह जल से भारी होता है। तेल का रंग रक्ताभ पिंगल होता है।

इसे संस्कृत में लवंग, देवकुशुम, शिखर, श्रीपुष्प, श्रीपसून, हिन्दी में लौंग, लवग्ड़, करनफलः, बंगाली में लौगः, तमिल में लवंगः, तेलगू में लवंगलूः कन्नड़ में लवंगमुः, मलायलम में करियाम्बः, अंग्रेजी में क्लोव तथा लेटिन में साइजिजियम ऐरोमेटिकम कहते हैं। यह वनस्पति जगत में मिरटेसी कुल का बहुपयोगी सदस्य है।

लौंग वृक्ष का बाह्य-स्वरूप

इसका सदा हरा-भरा रहने वाला वृक्ष 30–40 फुट ऊंचा होता है। तने से निकलकर चारों ओर कोमल व अवनत शाखाएं निकल कर फैली रहती है। इसके पत्ते हरित वर्ण लिए 3–6 इंच आण्डाकार होते हैं। भारतीय लौंग के पान आमने-सामने, बीच में चौड़े तथा दोनों किनारों पर नोक वाले होते हैं। पुष्प सुगन्धित व बैंगनी रंग के होते हैं। बाजार में जो लौंग बिकता है वह इस वृक्ष की पुष्पकलिका है। अच्छे पके लौंग होने पर अंगुली से दबाने पर तेल निकलता है।

रासायनिक संघटन : इसमें एक उड़नशील तेल पाया जाता है जिसमें यूजीनोल, एमिल, यूजीनोल, केरियाफाइलीन आदि मुख्य घटक होते हैं। इसके अलावा लवंग में बहुत से तत्व पाए जाते हैं।

लवंग के गुणधर्म : लवंग उष्ण, तीक्ष्ण, विपाक में मधुर, वीर्यशीतल, पित्तनाशक, नैव्रहितकारी, दीपन-पाचन, रूचिकारक, विषनाशक, शिरोरोगनाशक तथा कफ-पित्त, रक्तरोग, प्यास, वमन, अफारा, शूल, श्वास, हिचकी और क्षय नाशक है। लवंग तेल अग्निवर्धक, वातनाशक, दन्तशूल, कफ और गर्भिणी स्त्री का वमन का नाशक है।

स्व. डॉक्टर राधागोविन्दकर के मतानुसार लवंग अग्निप्रदीपक, उत्तेजक और उदरवातहर है। ये सब गुण इसमें पाए जाने वाले उड़नशील तेज की वजह से हैं। तेल त्वचा पर मर्दन करने पर उत्तेजक चर्म प्रदाहक व उग्रताजनक है। मालिश करने पर स्थानिक कौशिकाएं क्रियाशील हो जाती है। प्रारम्भ में गर्दन वाले स्थान पर चिनचिना, चरपराहट व वेदना होती है। फिर स्थानिक चेतना लोप हो जाती है। लवंग तेल कीटाणु (परोपजीवी कीटाणु) का नाशक और घाव का निवारक (एन्टीसेप्टिक) है।

इसके तेल का सेवन करने पर त्वचा के सदृश मुंह के अन्दर की सारी कोशिकाएं प्रसारित होती है। लार निःसरण में वृद्धि होती है। पश्चात् चेतना का ह्रास होता है। स्वाद की तीक्ष्णता के लिए जिव्हा की सभी वातनाड़ियां उत्तेजित होती है। इसकी सुगन्ध के द्वारा गंधग्राही केन्द्र उत्तेजित होता है। आमाशय में पहुंचने पर वहां उग्रता पैदा होती है एवं वहां पर पाई जाने वाली कोशिकाएं प्रसारित होती, फैलती है। आमाशय की मंथन क्रिया बढ़ जाती है फलतः आमाशय के रसस्त्राव में वृद्धि होती है। इस कारण क्षुधा जागती है। परिणामस्वरूप जठराग्नि सतेज होती है। यह आमाशय में स्थित वायु को बाहर निकालता है। इसलिए लवंग को वातहर भी कहा जाता है।

आन्त्र में तेज द्रव्य का रक्त में शोषण होने पर रक्त के भीतर पाए जाने वाले सफेद अणुओं (व्हाइट ब्लड सेल्स) की संख्या बढ़ जाती है एवं रक्त संचालन में भी तेजी आती है। आमाशय की वातनाड़ियों की उत्तेजना और रक्त संचालन की उत्तेजना, इन दोनों द्वारा हृदय को उत्तेजना पहुंचती है, जिससे हृदय स्वस्थ रहता है, ठीक से कार्य करता है।

लवंग द्रव्य वृक्क, त्वचा, श्वांसनलिका, जननेन्द्रिय और मूत्रमार्ग द्वारा बाहर निकलता है। जिससे बाहर होने के समय उन स्थानों के स्त्राव की वृद्धि कराता है एवं संक्रामक कीटाणुओं को नष्ट करता है। अतः लवंग शरीर की उक्त क्रियाओं को सुचारू रूप से क्रियान्वित करने हेतु सम्बन्धित अंगों को स्वस्थ रखता है।

लवंग के कुछ विशेष गुण

पाचन : लवंग भूख को जगाता है। इसके सेवन से आमाशय में रसस्त्राव अधिक होता है। मानसिक प्रसन्नता होती है एवं भोजन में रूचि उत्पन्न होती है। इसी गुण के कारण सुगन्धित दीपन-पाचन औषधियों में लौंग मिलाया जाता है।

अपना अहित करने वाले का भी कल्याण करने का
प्रयास करना परम मैत्री का प्रयोग है।
- आचार्यश्री महाश्रमण

श्रद्धावनत

रमेश शाह

उधना-सूरत

पूतिहर (एन्टीसेप्टिक) : लवंग मुख, आमाशय और अन्त्र में सड़न पैदा करने वाले कीटाणुओं को नष्ट करता है। यदि पेट में कीटाणुओं की उपस्थिति से आफरा आया हो तो वह भी दूर करता है।

श्वेत रक्त कणिकाओं की वृद्धि : लवंग का रक्त में उपस्थित श्वेत कणिकाओं की संख्या बढ़ाने का महत्वपूर्ण गुण रहा है, जिससे रक्त के भीतर आए हुए हानिकारक कीटाणुओं का नाश होता है। इसी उद्देश्य से ज्वर विनाशक औषधियों में लौंग को मिलाया है।

चेतना : देह में हुई किसी भी स्थान की रक्तवाहिनियों के संकोच, विकास में विकृति होकर आक्षेप आने पर उससे होने वाली वेदना को दूर करता है।

दुर्गन्धहर : कफ, आम, लार आदि की दुर्गन्ध को दूर करने के लिए लौंग दिया जाता है।

मूत्रजनन : वृक्क से लेकर मूत्रेन्द्रिय के मुख तक के मार्ग की शुद्धि करता है। वृक्क उत्तेजित होने से मुत्रोत्पति में वृद्धि होती है।

बाह्योपचार : इसका लेप करने पर चेतनाप्रद, वेदनास्थापन, पूतिहर, व्रणशोधन व व्रणरोपण क्रिया की सिद्धि होती है। नव्य चिकित्सकों के मतानुसार सामान्यतः लौंग के तेल के मर्दन का असर कपूर के तेल के सदृश होता है।

लवंग कल्प

लवंग फाण्ट : लौंग का मोटा-मोटा चूर्ण 10 ग्राम को उबलते हुए 100 मिली जल में मिलाकर ढक दें। आधे घंटे बाद जल छान लें। आधा चम्मच जल दिन में तीन बार पिलाने से उदरवात व अपच दूर होकर, जठर अग्निप्रदीप्त होती है।

लवंगादि वटी : लौंग, बहेड़ा, कालीमिर्च और कत्था, इन सबको समभाग मिलाकर बबूल की छाल के क्वाथ में 12 घंटे खरलकर छोटी-छोटी गोलियां बना लें। 1–1 गोली मुंह में रखकर रस चूसें। एक दिन में 10 गोली तक। यह कफ को पतलाकर सरलता से बाहर निकालती है और खांसने में होने वाले अधिक कष्ट को कम करती है तथा मिटाती है।

लवंगादि चूर्ण : लौंग, जायफल, जावित्री और पिप्पली पांच ग्राम, कालीमिर्च 20 ग्राम, सौंठ 160 ग्राम व मिश्री 200 ग्राम लें। इन सबको कूटकर छानकर चूर्ण बना लें। 2 से 3 ग्राम दिन में जल के साथ लें। इसको लेने से जीर्ण मन्द ज्वर, कफप्रकोप, पीलाकफ, बार-बार गिरना, खांसी आते रहना, प्रमेह श्वांस, अग्निमांघ, अरूचि, उदरवात, अपचन थोड़ा-थोड़ा दस्त होते रहना आदि विकारों का नाश होता है।

सूचना : लौंग आदि सुगन्धित औषधियों का चूर्ण आवश्यकतानुसार ताजा बनाना चाहिए। पहले से बनाकर रखने से उड़नशील तेल उड़ जाता है तथा स्थिर तेल रूपान्तरित हो जाता है।

अपचन : आमाशय की निर्बलता से अपचन उत्पन्न होने पर उदर में भारीपन, दूषित दुर्गन्धमय डकार आना, अरूचि मुंह फीका रहना आदि लक्षण दिखाई देते हैं। किसी-किसी को आफरा भी आ जाता है। ऐसी स्थिति में लवंग का फाण्ट या लवंग का तेल देने से तुरन्त लाभ पहुंचता है।

शिरशूल : 6 ग्राम लवंग को पानी में पीसकर तथा उसे थोड़ा गर्म का गाढ़ा लेप कनपटियों पर लगाने से शिरशूल में लाभ होता है।

नेत्ररोग : लवंग को तांबे के बरतन में पीसकर शहद मिलाकर अंजन करने से नेत्र के सफेद भाग के रोग मिटते है।

नजले से मस्तक शूल : दो लौंग तथा आधा ग्राम अफीम को पानी के साथ पीस व गरम करके ललाट पर लेप करने से नजले के कारण उत्पन्न शिरोवेदना शान्त हो जाती है।

कफ निष्कासन हेतु : लवंग के दो ग्राम जौकूट किए हुए चूर्ण को 125 मिली पानी में उबालें। चौथा भाग शेष रहने पर उतार छानकर थोड़ा गर्म-गर्म पी लें। यह कफ को पतला कर, शरीर से निकाल देने में अति उत्तम है।

श्वास की दुर्गन्ध : लवंग को मुंह में रखने से मुंह और श्वास की दुर्गन्ध मिटती है।

हृदय की जलन : तीन लौंग को शीतल जल में पीसकर मिश्री मिलाकर पीने से हृदय की जलन मिटती है।

दमा : लौंग आकड़े के फूल तथा काला नमक समभाग लेकर चने के आकार की गोलियां बना, एक गोली मुंह में रखकर चूसने से दमा व श्वांस नलिका के रोग मिटते हैं।

कुक्कुर खांसी : तीन या चार लौंग को आग पर भूनकर, पीसकर शहद मिलाकर चाटने से कुक्कुर खांसी मिटती है।

अजीर्ण : लवंग एक ग्राम और हरड़ तीन ग्राम का क्वाथ कर उसमें थोड़ा सा सैंधा नमक डालकर पिलाने से अजीर्ण मिटता है और दस्त साफ होता है।

भूख का लगाना : लवंग व छोटी पीपल दोनों का समभाग लें कपड़े में छान कपटकर चूर्ण बना लें। इस चूर्ण की डेढ़ ग्राम की मात्रा में प्रातः सायं मधु के साथ चाटने से ज्वर जन्य मन्दाग्नि व निर्बलता दूर होती है।

जी मिचलाना : लवंग को पानी के साथ पीसकर कुछ गर्म कर थोड़ा पीने से जी का मिचलना व प्यास (खुक) मिटती है।

अफारा : लौंग, सौंठ, अजवायन और सैंधा नमक 10–10 ग्राम, गुड़ 40 ग्राम पीसकर 300 मिली ग्राम की गोलियां बना लें। गोली दिन में 2 से 3 बार सेवन करने से अफारा, मन्दाग्नि दूर होती है।

बदहजमी : लौंग, सौंठ, काली मिर्च, पीपल, अजवायन 10–10 ग्राम, सैंधा नमक 50 ग्राम मिश्री 50 ग्राम सभी को पीस चीनी के बरतन में रखकर नींबू का रस इतना डालें कि सब चूर्ण उसमें तर हो जाए। फिर इसे धूप में सुखाकर सुरक्षित कर लें। भोजन के बाद एक चम्मच इस चूर्ण का सेवन करने से मुंह का स्वाद अच्छा हो जाता है तथा बदहजमी की खट्टी डकारें आनी बंद हो जाती है। ❐

मनुष्य में जितनी क्षमता होती है, उसका उतना उपयोग नहीं होता।

इसका एक कारण है संकल्प का अभाव।

– आचार्यश्री महाश्रमण

श्रद्धावनत

रमेश कुमार–सुरेश कुमार कोठारी

सूरत

सूरत में प्रेक्षा प्रशिक्षक शिविर का आयोजन

सूरत। तेरापंथ भवन सिटी लाइट में प्रेक्षा प्रशिक्षक लेवल 1 का शिविर प्रेक्षा फाउंडेशन के तत्वावधान में अणुव्रत जीवन विज्ञान अकादमी सूरत द्वारा आयोजित किया गया। प्रेक्षा फाउंडेशन के राष्ट्रीय संयोजक राजेन्द्र मोदी ने इस शिविर में प्रशिक्षण दिया। लगभग 25 शिविरार्थियों ने इस शिविर में भाग लिया। 15 शिविरार्थियों की लिखित एवं प्रायोगिक परीक्षा हुई। प्रेक्षा प्रशिक्षक मदनलाल दूधोड़िया एवं मनोज सुराणा का इस शिविर के संचालन में अणुव्रत जीवन विज्ञान अकादमी के अध्यक्ष गौतमचंद गादिया को विशेष सहयोग मिला।

'योग मोक्ष का साधन है'
11वीं प्रेक्षावाहिनी कार्यशाला का आयोजन

पीलीबंगा। प्रेक्षावाहिनी की 11वीं मासिक कार्यशाला जैन भवन प्रांगण में बुधवार को 'योग का जीवन में महत्व' विषय पर हुई। प्रेक्षावाहिनी संवाहक ओम प्रकाश जैन ने योग दिवस के संदर्भ में योग के महत्व की विस्तार से जानकारी प्रदान की। जैन दर्शन में योग को मोक्ष का साधन कहा गया है। सीमित आत्मा का असीमित आत्मा में मिलन-योग है, जहां दुःख का कोई स्थान नहीं है। इस संदर्भ में भेद विज्ञान का महत्वपूर्ण प्रयोग कायोत्सर्ग सभी भाई बहनों को करवाया गया। कन्या मंडल की संयोजिका बबिता जैन ने योगिक क्रियाएं करवाई। सह-संवाहक सतीश पुगलिया ने योग के बढ़ते अंतरराष्ट्रीय महत्व के बारे में बताया महिला मंडल की अध्यक्षा विनोद बांठिया ने प्रेक्षावाहिनी द्वारा कार्यशाला के माध्यम से किए जा रहे मेडिटेशन योग कार्य के प्रति अपनी शुभ भावना प्रकट की। जैन सभा अध्यक्ष मूलचंद बांठिया, बंशीलाल दुगड़, क्षेत्रीय समन्वयक विजयचंद दुगड़, महासभा सदस्य देवेंद्र बांठिया, तेरापंथ सभा मंत्री महेंद्र नौलखा, युवक परिषद मंत्री रुपेश सुराणा, महिला मंडल मंत्री ज्योति बांठिया, जेठी देवी दुगड़, सुशीला नाहटा, रामशरण आश्रम के केवल कोठारी, संजय, राजीव दुग्गड मालचंद पुगलिया, राजू वेद एवं कन्या मंडल कार्यशाला में विशेष रुप से उपस्थित होकर सहभागी बने। कन्या मंडल ने भी प्रेक्षावाहिनी में सम्मिलित होने की इच्छा जताई।

विशाल योग शिविर आयोजित

कांदिवली। प्रेक्षाध्यान योग साधना केन्द्र द्वारा कांदिवली मुम्बई में विशाल कार्यक्रम का भव्य आयोजन किया गया। श्री क्रसांगली आकुर्ली माता मन्दिर के विशाल परिसर में योग का शानदार व जबरदस्त कार्यक्रम प्रेक्षाध्यान केन्द्र द्वारा संपन्न हुआ। मन्दिर के परिसर हॉल में खचाखच भरे इस हॉल में जब वरिष्ठ प्रेक्षा प्रशिक्षक पारसमल दुगड़ ने अपनी चिर परिचित शैली में योग के प्रयोग करवाये तो उपस्थित जनसमुदाय मंत्रमुग्ध हो उठा सभी ने प्रसन्नतापूर्वक करते हुए योग का आनन्द लिया। दुगड वे योग करते हुए अच्छा समां बांधा। दुगड ने कहा ऋषि मनीषियों का दिया हुआ भारत का योग जीवन जीने की अद्‌भुत कला हैं। सम्पूर्ण मानव जाति के लिए बहुत बड़ा उपहार हैं। कार्यक्रम के दौरान सभी भाई बहनों ने एक जैसी ड्रेस पहनी, सबको आकर्षित कर रही थी। इस कार्यक्रम में अणुव्रत जीवन विज्ञान अकादमी मुम्बई के संयोजक प्रीतमलजी हिरण, कमलेशजी कांदिवली तेयुप के अध्यक्ष विनोदजी डागलिया एवं मन्दिर के ट्रस्टीगण ने भी अपनी उपस्थिति दर्ज करवायी । कांदिवली का यह प्रेक्षाध्यान योग साधना केन्द्र विगत 21 वर्षो से बिना किसी अवकाश के चलता हुआ 365 दिन मुम्बई समाज को अपनी निःशुल्क सेवाएं प्रदान कर रहा हैं ।

प्रेक्षाध्यान कार्यशाला : प्रेक्षाध्यान परिचय

कोबा, गांधीनगर। कर्ण फिजियोथैरेपी सेन्टर, वेट मैनेजमेंट स्टूडियो में प्रेक्षाध्यान कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में सर्वप्रथम प्रेक्षा पेशिक्षिका नीलम जैन के द्वारा प्रेक्षाध्यान गीत का संगान किया गया। तत्पश्चात् प्रेक्षाध्यान क्या है?एवं उसे क्यों किया जाता है इसकी विस्तृत जानकारी प्रदान की गई। प्रेक्षाध्यान के विभिन्न पहलू को समझाते हुए, सम्पूर्ण कायोत्सर्ग, अनुप्रेक्षा का प्रयोग करवाया गया तथा ऊँ, ह्रीं, अर्हम्, नमः मंत्र का रंगों के साथ उच्चारण करवाया गया। प्रेक्षा विश्व भारती में स्थित 'महाप्रज्ञ नेचुरोपेथी एंड योग इंस्टिट्यूट' में अति आधुनिक संसाधनों से सज्जित एवं विशेषज्ञ द्वारा उपचार किया जाता है। इसकी विस्तृत जानकारी सभी को प्रदान की गई। अंत में प्रयोगों के साथ कार्यशाला को सम्पन्न किया गया। प्रत्येक ने कार्यशाला को सराहा एवं पुनः प्रेक्षाध्यान करने एवं प्राकृतिक चिकित्सा लेने के लिए प्रेक्षा विश्व भारती आने का उत्साह दिखाया।

केवल ध्यान करने से पाचन शक्ति कमजोर होती है इसलिए योगा भी जरूरी : समण सिद्धप्रज्ञ

संगरूर। शासनश्री मुनिश्री विजयजुमारजी के निर्देश से समणश्री सिद्धप्रज्ञजी द्वारा अंतरराष्ट्रीय योग दिवस पर मानस देवी मंदिर संगरूर में सैंकड़ों योग प्रेमियों के बीच प्रेक्षा योग का प्रशिक्षण दिया गया। समनजी ने प्रेक्षाध्यान योग की जानकारी देते हुए कहा कि प्रेक्षाध्यान आचार्यश्री महाप्रज्ञजी द्वारा अन्वेषित योग साधना पद्धति है। प्रेक्षा ध्यान-योग शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक शांति, भावनात्मक सन्तुलन और पारिवारिक सामंजस्य का समन्वित अनुप्रयोग है। इस अवसर पर समणश्री ने कायोत्सर्ग, ज्योति केंद्र प्रेक्षा, योगिक क्रिया, संकल्प शक्ति एवं हास्य योग के प्रयोग भी कराये। संगरूर के योग शिक्षक राजकुमार जिंदल ने स्वागत एवं आभार ज्ञापन करते हुए पुनः आगमन हेतु निवेदन किया। तेरापन्थ सभा के अध्यक्ष अरिहंत जैन, सलाहकार अक्षय कुमार जैन का सराहनीय योगदान रहा।

'प्रतिदिन करना चाहिए प्रेक्षाध्यान'

राजसमंद। अंतरराष्ट्रीय योग दिवस के अवसर पर जिला स्तरीय कार्यक्रम में प्रेक्षा वाहिनी राजसमंद के सदस्यों ने भाग लिया। सुबह 7 से 8 बजे के कार्यक्रम में विभिन्न योग आसन प्राणायाम के प्रयोग करवाए गए, जिसमें सांसद हरिओम सिंह राठौड़ एवं उच्च शिक्षा मंत्री किरण माहेश्वरी का सान्निध्य प्राप्त हुआ। प्रेक्षा वाहिनी संयोजिका सीमा कावड़िया ने बताया सांसद हरिओम सिंह राठौड़ ने प्रेक्षा वाहिनी सदस्यों को नियमित योग एवं मेडिटेशन करने की प्रेरणा दी। साथ ही वाहिनी द्वारा संचालित कार्यों की सराहना की। इस अवसर पर प्रेक्षा वाहिनी सदस्य विनोद बोहरा, डॉ. विमल कावड़िया, कमलेश कोठारी, मनीष धोखा, राजेंद्र सेठी, निर्मला कोठारी, सुधा कोठारी, आशा सोनी, विनीता बाफना, सुनीता मेहता, सरिता लिंगा, बालू जूनकर, मंजू दक आदि सदस्यों की सहभागिता रही।

॥प्रेक्षाध्यान॥

जैन विश्व भारती में अष्ट दिवसीय प्रेक्षाध्यान शिविर सम्पन्न

लाडनूं। जैन विश्व भारती के तुलसी अध्यात्म नीडम में प्रेक्षा फाउंडेशन द्वारा 1 जुलाई से 8 जुलाई 2018 को आयोजित नवकार मंत्र आधारित प्रेक्षाध्यान शिविर सम्पन्न हुआ। शिविर का प्रारम्भ शिविरार्थियों को ध्यान दीक्षा देने से सम्पन्न हुआ। समणी विनीतप्रज्ञाजी ने बताया कि सतत ध्यान से एवं ध्यान की गइराई प्राप्त करने के लिए विश्वास एवं एकाग्रता अति आवश्यक है। शिविर की विभिन्न कक्षाओं में गमन योग, प्रेक्षाध्यान, आसन प्राणायाम,मंत्र प्रेक्षा,कायोत्सर्ग इत्यादि प्रयोग करवाये गये। समणी विनीतप्रज्ञाजी के निर्देशन में आयोजित नवकार मंत्र आधारित प्रेक्षाध्यान शिविर में देश-विदेश के विभिन्न भागों न्यू जर्सी, चेन्नई, लुधियाना, नई दिल्ली, सुरत, कच्छ, मुम्बई, गंगाशहर आदि स्थानों से प्रतिभागियों ने अति उत्साह के साथ विभिन्न प्रयोग किये। अष्ट दिवसीय शिविर के दौरान प्रेक्षाध्यान की विभिन्न कक्षाओं में समणी विनीतप्रज्ञाजी, समणी अमलप्रज्ञा, समणी मृदुप्रज्ञा,समणी श्रेयसप्रज्ञा, समणी अमृतप्रज्ञा, समणी हिमप्रज्ञा, एवं प्रशिक्षक मदनलाल दुधोड़िया, गौतम गादिया आदि का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ। शिविर संचालन की व्यवस्थाओं में डा. विजयश्री शर्मा, महावीर प्रजापत, का विशेष सहयोग रहा।

नागपुर में मनाया गया योगदिवस - त्रिदिवसीय कार्यशाला का शानदार समापन

नागपुर। तेरापंथ भवन नागपुर के महाप्रज्ञ प्रेक्षाध्यान केंद्र में त्रिदिवसीय योग कार्यक्रम आयोजित किया गया। प्रेक्षा प्रशिक्षक आनंदमल सेठिया ने तीनों दिन ध्यान, आसन, प्राणायाम के विभिन्न प्रयोग करवाये। प्रथम दिन जिम संचालिका संगीता पुगलिया ने बड़ी सरल विधि से आसन के कई प्रकारों को एक सीक्वेंस में करवाकर नवीनता का समावेश किया। द्वितीय दिन योग साधक भारत गुप्ता ने योग के 8 प्रकारों की सुंदर व्याख्या की। तृतीय दिन अनिता अगरकर ने लेश्याध्यान करवाके रंग चिकित्सा के बारे में बताया। साध्वी श्री पुण्य दर्शनाजी ने योग व ध्यान के प्रयोग नियमित करने की प्रेरणा दी। प्रेक्षा साधक अमित जैन ने आत्मा से साक्षात्कार करने का माध्यम श्वास-विषय को प्रभावक ढंग से समझाया। समाजसेवी सुभाष कोटेचा ने प्रेक्षा ध्यान के प्रयोगों को विज्ञान सम्मत बताते हुए समाज बंधुओं से केंद्र में नियमित आने की अपील की।

अनुभव

मै हार्ट एवं शुगर पेशेन्ट हूँ और जब स्वास्थय शिविर के लिये इस केन्द्र में आया था तो शुगर के लिये दो टेबलेट लिया करता था और डॉक्टर के कहने पर एक गोली कम कर दी और एक गोली लेने लगा।, मन में भय था कि कही शुगर लेवल बढ़ ना जाये। इसलिए चार दिन बाद शुगर चेक कराया तो आश्चर्यचकित रह गया। खाना खाने के बाद 80 एमजी आई जो कि पहले 120–124 के आस-पास रहती थी। इसका मुख्य कारण यहां पर कराये जाने वाले ध्यान के प्रयोग, प्राकृतिक चिकित्सा के उपचार, योग-आसन, प्रेक्षाध्यान, कायोत्सर्ग के प्रयोग से मेरी शुगर लेवल नहीं बढ़ी। प्रेक्षाध्यान शिविर में आकर बहुत अच्छा लगा, योग तथा नैचुरोपैथी के उपचार से मेरी गैस व साइनस की समस्या में काफी सुधार आया हैं। घुटने का दर्द भी कम है। इन्हीं सब क्रियाओं द्वारा हार्ट प्रॉब्लम भी ठीक हो जाएगी ऐसा मै मानती हूँ। यहां के डॉक्टर एवं शिक्षकों का समस्या समाधान कराने का तरीका बहुत अच्छा है। प्रयास करेंगे कि शिविर में भाग लेते रहें तथा औरों को भी प्रेरणा देंगे। धन्यवाद।

उर्मिला छाबड़ा व बी.के. छाबड़ा, गुड़गांव, हरियाणा

मैं बिरमवती पिछले कई वर्षो से मोटापा, शुगर, कब्ज, ब्लडप्रेशर, एवं घुटनों के दर्द से परेशानी थी। मेरा वजन 117 किलोग्राम होने की वजह से मुझे चलने फिरने उठने बैठने में बड़ी तकलीफ होती थी। मैं पिछले 5 साल से अंग्रेजी दवायें खाकर तंग आ चुकी थी मुझे इन्सुलिन भी लगती फिर भी मेरी फास्टिंग शुगर 350 से नीचे आ ही नहीं रही थी। मैं बहुत परेशान हो गई थी। मुझे कठोर कब्ज था जिससे प्रतिदिन मल नहीं आता था पेट फूल जाता था और सांस लेने में भी तकलीफ होती थी। मुझे पहले दिन से ही यहां बहुत लाभ हुआ। खाने में भी फल-सब्जियां, दलिया, खिचड़ी, रोटी-सलाद, हर्बल चाय, काढ़ा आदि हल्का खाना दिया गया। दूसरे दिन से मेरा पेट साफ होने लगा और शरीर का भारीपन कम हुआ, मुझे पहले नींद नहीं आती थी। किन्तु पहले दिन से ही जब कायोत्सर्ग कराया गया तो मैं सोने लगी और मेरी आंखों की जलन भी शांत हो गई। तीसरे दिन मेरी शुगर कम होकर 200 रह गई। दो दिन के बाद मेरा मन यहां लगने लगा। मुझे बहुत टेंशन भी थी जो प्रेक्षाध्यान, मंत्रो के प्रयोग, रंगो का ध्यान व कायोत्सर्ग करने से खत्म हो गई। चौथे दिन मेरा ब्लूडप्रेशर 130 / 90 हो गया जो पहले दिन 150 / 100 था। पांचवे दिन मेरी शुगर 175 आ गई इन्सुलिन की मात्रा भी कम करनी पड़ी। कैम्प के अंतिम दिन मेरी शुगर 150 हो गई। मेरा वजन कम हो गया, और घुटनों का दर्द ठीक होने से अब मै आराम से चल पा रही हूँ।

बीरमवती, फतेहपुरबेरी, नई दिल्ली-७४

लाडनूं में आयोजित शिविरार्थियों के अनुभव

शिविर के समापन सत्र में शिविरार्थियों ने शिविरकाल के अपने अपने अनुभव साझा किए। तथ्यात्मक विचारों का आदान प्रदान हुआ। उनमें से कुछ विचार इस प्रकार है

- प्रेक्षाध्यान अपने आप को समझने का एक अच्छा एवं सबसे बढिया तरीका है। मुझे श्वास प्रेक्षा के बारे में जानकारी प्राप्त हुई एवं श्वास का महत्व समझ आया। यहां आठ दिन जिन्दगी बिना किसी तनाव के गुजरी। मुझे यहां बहुत अच्छा अनुभव हुआ। सलिल कुमार, लुधियाना
- मुझे यहां आकर बुहत अच्छा लगा। मेरी यह भावना है कि मैं जब भी दुबारा यहां सहभागिता करुं अपने साथ कुछ अन्य को भी यहां लाऊं ताकि वो भी यहां के अच्छे वातावरण में आनंद का अनुभव करें। बीना रानी, भटिण्डा
- मेरा यह सौभाग्य है कि मुझे दूसरी बार शिविर में सहभागिता का अवसर प्राप्त हुआ है। मैंने यहां आकर अपनी आत्मा को देखना सीखा। मैंने स्वयं में शारीरिक, भावनात्मक एवं मानसिक सुधारों को अनुभव किया। समणीजी एवं प्रशिक्षकों का बहुत सहयोग प्राप्त हुआ। विनीत शाह, सूरत
- मेरे लिए यह आठ दिनों का अनुभव अभूतपूर्व रहा। समणीवृन्द एवं प्रशिक्षकों द्वारा अत्यन्त ही सहज तरीके से प्रेक्षाध्यान की विभिन्न तकनीकों से परिचित करवाया। मेरी यह भावना है कि मैं आगामी वर्षो में इस सेवा कार्य में स्वयं को समर्पित कर दूं। दिलीप कुमार चोपड़ा, भोपाल
- मुझे ध्यान इत्यादि को सीखने का प्रारम्भ से ही शौक रहा है। मैंने विभिन्न शिविर में भाग लिया हुआ है। यहां जो सीखा उसमें श्वास प्रेक्षा, कायोत्सर्ग, भाव क्रिया इत्यादि से मुझे अच्छा अनुभव प्राप्त हुआ। मेरी भावना है कि मैं प्रेक्षा प्रशिक्षक बनकर अन्यों को इस अवदान से लाभान्वित करवा सकूं। प्रदीप जैन, न्यू जर्सी
- मुझे अर्हम की ध्वनि से स्पंदनों की अनुभूति हुई एवं अर्हम का जाप भी अत्यन्त प्रभावी रहा। गुरुदेव के मुख से नमस्कार महामंत्र का जाप सुनना बहुत ही अच्छा लगा। मैनें रंगो पर ध्यान करना पहली बार सीखा। समणीवृन्द एवं प्रशिक्षकों का अच्छा सहयोग प्राप्त हुआ। अरविन्द कुमार अमृतलाल दोशी, भरुच
- मेरा यह प्रथम शिविर था। मैंने यह जाना कि व्यक्ति के जीवन में एक अच्छी दिनचर्या का होना अत्यन्त आवश्यक है। श्वास के बारे में इतनी सूक्ष्म बातों की जानकारी यहां आकर ही प्राप्त हुई है। कायोत्सर्ग द्वारा संचेतना एवं शिथिलाचार का अनुभव प्राप्त हुआ। मैं अन्य लोगों को भी शिविर हेतु प्रोत्साहित करुंगा। प्रवीण बैद, दिल्ली
- मेरे पास अभिव्यक्ति करने के लिए शब्द नहीं है, अनुभव बहुत ही अच्छा रहा। प्रारम्भ में ध्यान में थोड़ा कम मन लगा परन्तु मैंने यहां आकर जीवन जीने का तरीका सीखा। प्रत्येक कार्य को भाव क्रिया से करने का तरीका सीखा। मै नियमित रूप से ध्यान, प्राणायाम, योग इत्यादि की क्रियाएं नियमित रुप से करुंगा। महेश प्रभुलाल मेहता, कच्छ
- प्रेक्षाध्यान के इस शिविर का मेरा अनुभव अद्वितीय, अभूतपूर्व एवं बेजोड़ है। मैंने इन आठ दिनों में स्वयं में बहु परिवर्तन महसूस किया। प्रेक्षाध्यान से मेरे शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक विकारों का समाधान हुआ। आसन प्राणायाम से शरीर में लचीलेपन का विकास हुआ। इस भागदौड़ भरी जिंदगी, शिविर के माध्यम से मुझे अपने आपको देखने का अवसर प्राप्त हुआ। कमलेश गादिया, सूरत
- प्रेक्षाध्यान शिविर से हमें बहुत कुछ मिला है जैसे मितभाषण, प्रतिक्रिया विरति, मिताहार, मैत्री इत्यादि। दीर्घ श्वास प्रेक्षा, अर्हम की धुन पर ध्यान में मन एक पल भी विचलित नहीं हुआ। शिविर का मेरा अनुभव बहुत अच्छा रहा। चन्दा चौपड़ा, मुम्बई

अन्य शिविरार्थियों ने भी शिविर की व्यवस्थाओं एवं यहां के शान्त वातावरण को अच्छा महसूस किया।

अनाग्रह अच्छा है पर आग्रह भी सर्वत्र बुरा नहीं। सत्य की खोज में अनाग्रह उपयोगी है और प्राप्त सत्य की रक्षा के लिए आग्रह भी लाभदायी है।
- आचार्यश्री महाश्रमण

श्रद्धावनत

आचार्य महाश्रमण मर्यादा महोत्सव व्यवस्था समिति

कोयम्बटूर

प्रेक्षाध्यान शिविर में भाग लेने वाले शिविरार्थियों से अनुरोध है कि आप अपने अनुभव हमें प्रकाशन हेतु भेजें। -सम्पादक

जीवन की दिशा बदलने वाला जीवनोपयोगी एवं प्रेरणादायक साहित्य

जैन विश्व भारती प्रकाशन

मूल्य : 120/-

मूल्य : 50/-

मूल्य : 120/-

मूल्य : 100/-

मूल्य : 80/-

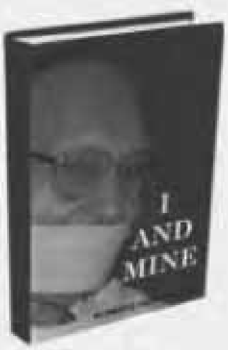

मूल्य : 150/-

मूल्य : 180/-

मूल्य : 100/-

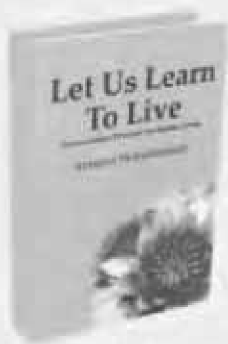

मूल्य : 50/-

मूल्य : 80/-

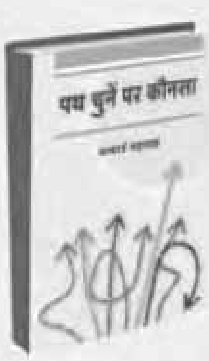

मूल्य : 130/-

मूल्य : 90/-

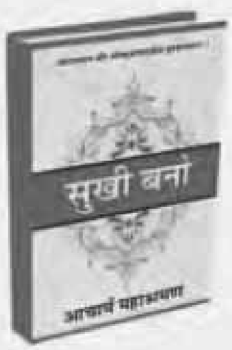

मूल्य : 90/-

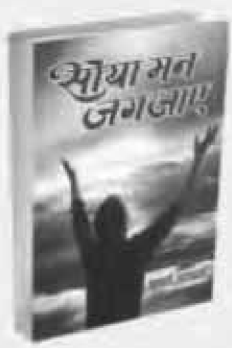

मूल्य : 140/-

आध्यात्मपरक साहित्य * संस्कृत एवं प्राकृत साहित्य * दर्शन साहित्य

* इतिहास साहित्य * बाल साहित्य * प्रेक्षाध्यान एवं जीवन विज्ञान साहित्य

* एकांकी साहित्य * कथा साहित्य * जीवनोपयोगी साहित्य

आनलाईन शापिंग हेतु : https://books.jvbharati.org

अधिक जानकारी के लिए लॉग ऑन करें : www.jvbharati.org Email : books@jvbharati.org

Contact : 8742004849, 9928393902

Date of Publication : 05.08.2018

Date of Posting : 05/07-08-2018

डाक पंजीयन संख्याः नागौर/ 016/18–20

भारत सरकार पंजीयन संख्या : 35209/80

If undelivered please return to : Jain Vishva Bharati, Ladnun - 341306, Dist. Nagaur (Raj.) Ph. : 01581-226080

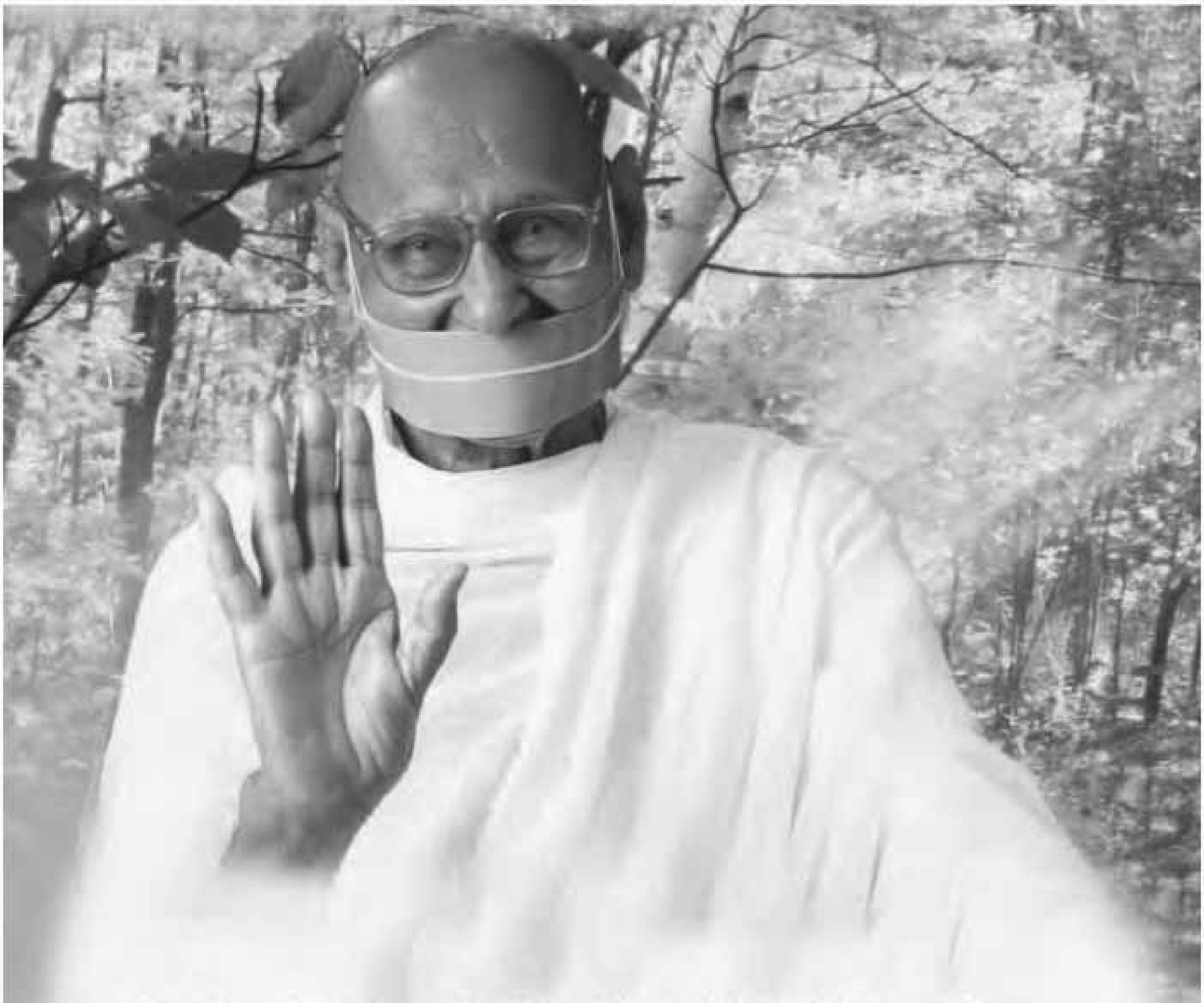

Shed the 'I', Renounce the 'Mine', Everything will be your, Forever.

-Acharya Mahapragya

With best compliments from :

Ratanlal Basant Kumar Parakh (Churu) Kolkata

ORBIT GROUP

... BUILDING RELATIONSHIPS

The Orbit, 1 Garstin Place, Kolkata-700 001 Ph: 4011 9050 (20 lines)

Fax: 2210 1256 email: info@orbitgroup.net | www.orbitgroup.net

Orbit Residences. The key to high living.

प्रकाशक-मुद्रक : श्री राजेश कोठारी द्वारा तुलसी अध्यात्म नीडम्, जैन विश्व भारती, लाडनूं के लिए प्रकाशित तथा जायन आई. एन. सी. कॉर्पोरेशन, नई दिल्ली में मुद्रित।
संपादक – जैन लूणकरण छाजेड़